मिर्गी
संपूर्ण जानकारी

लोकोपयोगी विज्ञान

मिर्गी

संपूर्ण जानकारी

एम. सी. माहेश्वरी

अनुवाद
अपूर्व पौराणिक

एकः सूते सकलम्

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

ISBN 81-237-2725-9

पहला संस्करण : 1999 *(शक 1921)*

All you want to know about EPILEPSY *(Hindi)*

रु. 30.00

निदेशक, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, ए-5 ग्रीन पार्क,
नयी दिल्ली-110016 द्वारा प्रकाशित

विषय-सूची

प्रस्तावना

हाल के वर्षों में मिर्गी रोग संबंधी ज्ञान में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। भारत में मिर्गी रोग की व्यापकता दर 5 से 10 रोगी प्रति हजार व्यक्ति है, अर्थात् देशभर में मिर्गी के 35 से 70 लाख रोगी हैं। इनमें से अधिकांश रोगियों का उपचार सामान्य चिकित्सकों द्वारा किया जाता है। मिर्गी रोग के निदान तथा उपचार के संबंध में पिछले कुछ समय में हुए वैज्ञानिक विकास का लाभ समस्त रोगियों को मिल सके, इस हेतु आवश्यक जानकारी का प्रसार दो तरीकों से किया जा सकता है। पहला तरीका है—सामान्य चिकित्सकों को शिक्षित करना। अधिकांश चिकित्सक, व्यस्तता के कारण आयुर्विज्ञान में हो रही प्रगति से स्वयं को परिचित नहीं रख पाते हैं। अनिवार्य पुनर्प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों के अभाव में अधिकांश चिकित्सकों को नया कुछ सीखने के लिए प्रेरित कर पाना बहुत मुश्किल है। दूसरा तरीका है—रोगियों, उनके संबंधियों व मित्रों को शिक्षित करना। बीमारी के बारे में सीखने की चाहत व सन्नद्धता रोगियों व उनके संबंधियों से अधिक किसी में न मिलेगी। इस वर्ग को श्रेष्ठ वैज्ञानिक जानकारी उपलब्ध करा कर, हम शायद चिकित्सकों में अधिक रुचि पैदा कर पाएं। इस पुस्तक को लिखने का प्रमुख उद्देश्य है, सही निदान के पश्चात उपयुक्त उपचार तथा मिर्गी-इतर अवस्थाओं की पहचान कर पाने में सहायता करना।

यह पुस्तक विशेष रूप से मिर्गी के रोगियों व उनके संबंधियों के लिए लिखी गयी है। तंत्रिकाविज्ञान (न्यूरालाजी) व संबद्ध विषयों के प्रशिक्षार्थी मिर्गी रोगियों के निदान व उपचार के संबंध में इस पुस्तक से कुछ दिशानिर्देश ले सकते हैं। विषय संबंधी प्रामाणिक पाठ्य-पुस्तकों की आवश्यकता फिर भी बनी रहेगी। कुछ तथ्यों को जानबूझकर दोहराया गया है ताकि कुछ विशेष मुद्दे, बिना दूसरे अध्यायों

का हवाला दिए, बेहतर तरीके से समझाए जा सकें।

इस पुस्तक को लिखने की प्रेरणा, अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान, नयी दिल्ली के तंत्रिकाविज्ञान बाह्यरोगी विभाग में आने वाले रोगियों व परिज़नों से प्राप्त हुई है। इस पुस्तक के माध्यम से किसी बड़े अस्पताल के बाह्यरोगी विभाग में हर कार्यदिवस में प्रतिदिन उठने वाले प्रश्नों व शंकाओं के समाधान का प्रयास किया गया है, परंतु क्या करें, क्या न करें की शैली में नहीं वरन्, तथ्यों को वैज्ञानिक तरीके से समझाया गया है। लेखक को विश्वास है कि इस उपाय का प्रभाव दीर्घकालिक होगा तथा इससे मिर्गी से जुड़े अंधविश्वास व मिथ्या धारणाएं दूर करने में मदद मिलेगी। वैज्ञानिक परिशुद्धता की परवाह न करते हुए तथ्यों को समझाने के लिए कुछ स्थलों पर भाषा सरल रखी गयी है।

मैं, अपनी पत्नी डा. शशि माहेश्वरी का ऋणी हूं जिन्होंने न सिर्फ लेखन के लिए उचित वातावरण प्रदान किया, बल्कि कार्य को पूरा करने की प्रेरणा भी दी।

यह बहुत संतोषजनक व उत्साहवर्द्धक था जब प्रथम संस्करण (अंग्रेजी) को पढ़ने के बाद कुछ रोगियों ने मिर्गी रोग को समझने और उसका उपचार करने में इसे उपयोगी व ज्ञानवर्धक पाया। इस द्वितीय संस्करण में अधिकांश अध्याय संशोधित व नवीनीकृत कर दिए गये हैं। रोगियों के सुझाव व नयी जानकारियों को शामिल कर लिया गया है। विषय की समझ बढ़ाने के लिए सी. टी. स्कैन व एम. आर. आई. स्कैन चित्रों को सम्मिलित किया गया है। नयी औषधियों के विकास के औचित्य पर नया अध्याय लिखा गया है।

पुस्तक के द्वितीय संस्करण को प्रकाशित करने की शीघ्र सहमति देने के लिए मैं नेशनल बुक ट्रस्ट का आभारी हूं। मैं रैनबैक्सी लेबोरेट्रीज लिमिटेड में चिकित्सा सेवाओं के निदेशक डा. ओ. पी. सूद के प्रति मुख्य पृष्ठ के लिए चित्र तथा अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान में तंत्रिकाविकिरण विज्ञान विभाग के प्रोफेसर एन. के. मिश्रा के प्रति सी टी और एम आर आई चित्र उपलब्ध कराने के लिए आभार व्यक्त करता हूं। श्री आर. शर्मा द्वारा दी गयी लिपिकीय सहायता के प्रति भी मैं आभार व्यक्त करता हूं।

एम. सी. माहेश्वरी

परिभाषा

शरीर के अन्य भागों के समान मस्तिष्क में रचनात्मक इकाई कोशिकाएं (सेल) होती हैं जिन्हें नयूरान कहते हैं। मस्तिष्क की इन कोशिकाओं में विद्युत संकेत या धारा पैदा करने की क्षमता होती है। इन्हीं विद्युत संकेतों के माध्यम से शरीर के दूरस्थ भागों तक विभिन्न संदेश भेजे जाते हैं। एक मस्तिष्क कोशिका एक साथ अनेक संदेश ग्रहण भी करती है तथा भेजती भी है। सामान्यतः यह सब अत्यंत सतर्कता एवं व्यवस्थित ढंग से होता है। इसलिए अलग-अलग क्रियात्मक संकेत व संदेश आपस में गड्डमड्ड नहीं होते। मस्तिष्क एक टेलीफोन स्विच-बोर्ड की तरह काम करता है। यदि आने-जाने वाली सूचनाएं गलत खांचों में प्रवाहित हो जायें अथवा स्विच बोर्ड में कोई अन्य खराबी आ जाये तो संचार व्यवस्था में अराजकता और त्रुटि उत्पन्न हो जायेगी। मस्तिष्क में सभी क्रियात्मक कार्य किसी एक ही स्थान पर संपन्न नहीं होते, बल्कि वे विभिन्न गहराई में उपस्थित अलग-अलग भागों द्वारा संपादित होते हैं। किस भाग की कोशिकाओं का काम अव्यवस्थित हो गया है अथवा गड़बड़ा गया है, वह मस्तिष्क के उस हिस्से के अव्यवस्थित अथवा त्रुटिपूर्ण कार्य से परिलक्षित होगा। स्विच बोर्ड की गड़बड़ी केवल एक बार या अलग-अलग अंतराल पर भिन्न-भिन्न अवधि के लिए बार-बार हो सकती है। मिर्गी (एपिलेप्सी) भी एक ऐसी ही विद्युतीय गड़बड़ी है जो मस्तिष्क कोशिकाओं से निकलने वाले अनियमित आवेशों के कारण होती है। ये विद्युतीय आवेश अचानक एवं बार-बार उठते हैं। इन आवेशों के समय शरीर की निम्न क्रियाओं में से एक या एक से अधिक प्रभावित हो भी सकती हैं, और नहीं भी, जैसे कि होशोहवास, प्रेरक क्रिया (मोटर एक्शन या हिलना-डुलना), संवेदी क्रिया (सेंसरी फंक्शन या इंद्रियों द्वारा ग्रहित जानकारी) तथा मनोवैज्ञानिक एवं व्यवहार

संबंधी कार्य। नैदानिक रूप से यह रोग किस प्रकार प्रकट होता है, यह इस बात पर निर्भर करता है कि कौन-सी मस्तिष्क कोशिकाएं असामान्य हो गयी हैं तथा विद्युतीय आवेश की गति व दिशा क्या है। मिर्गी रोग में आवेशों की अनियमितता बार-बार होती है। एक अकेले दौरे या फिट या घटना को मिर्गी नहीं मानना चाहिए। दौरे के समय होने वाली प्रेरक क्रिया झटकों व अकड़न का रूप लेती है तथा मुख्य 'दौरा' या कन्वल्शन कहलाती है। एक बार के झटके को सीज़र कहते हैं। मिर्गी को लोग अन्य नामों से भी जानते हैं—फिट्स, चक्कर, बेहोशी, झटके, दौरे। इस प्रकार मिर्गी एक मस्तिष्क का रोग है।

अंधविश्वास

अनेकानेक वर्षों तक मिर्गी को मस्तिष्क का रोग समझा ही नहीं जाता था। हिप्पोक्रेट्स ने सुझाया कि इस बीमारी का केंद्रस्थल मस्तिष्क में होता है जहां की शिराओं में कफ-वात आदि जमा हो जाने से उनका मार्ग अवरुद्ध हो जाता है और दौरे पड़ते हैं। मिर्गी को लेकर मिथ्या अवधारणाएं व अंधविश्वास समाज के सभी वर्गों में व्याप्त रहे हैं। अनेक देशों में शिक्षा से ये मिथ्या धारणाएं एवं अंधविश्वास वस्तुतः पूरी तरह समाप्त हो गये हैं। परंतु भारत में आज भी अंधविश्वास और मिथ्या धारणाएं, शहरी व ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में, बहुतायत में मौजूद हैं। कई लोग सोचते हैं कि मिर्गी के दौरे, ऊपरी शक्तियों के कारण पड़ते हैं। दूसरे अनेक लोग दुष्ट आत्माओं, भूत-प्रेतों, जादू-टोनों आदि को इसका कारण मानते हैं। कुछ लोग इसे मानसिक बीमारी भी मानते हैं तथा मिर्गी से पीड़ित व्यक्ति को पागल समझते हैं।

इन्हीं विश्वासों पर निर्भर करता है कि लोग मिर्गी से छुटकारा पाने के लिए क्या उपाय अपनाते हैं। जो लोग यह मानते हैं कि रोगी दुष्ट आत्माओं के वश में है, वे दुष्ट आत्माओं से छुटकारा दिलाने के लिए झाड़-फूंक सहित हर संभव उपाय करते हैं। देवी-देवताओं को खुश करने के लिए अनेक धार्मिक अनुष्ठान किए जाते हैं। अनेक बार प्रेतात्माओं को भगाने के लिए रोगी को चोट भी पहुंचाई जाती है। दुष्ट शक्तियों को दूर भगाने के लिए खोपड़ी में छेद भी किए जाते हैं। मरीज को फटे जूते की तली सुंघाई जाती है। हवा को शुद्ध करने के लिए कुछ लोग रोगी के चेहरे व आंखों पर पानी के छींटे मारते हैं। झाड़-फूंक करने वाले अक्सर रोगी को गले, बांह तथा कलाई में बांधने के लिए तावीज व धागे देते हैं। मरीज व उसके परिवारजनों को इन अंधविश्वासों के कारण प्रायः

खूब लूटा जाता है। इन सबसे न केवल आर्थिक हानि होती है, बल्कि सही उपचार में विलंब भी हो जाता है, जिससे बीमारी बढ़ जाती है जो कि आरंभिक अवस्था में रोकी जा सकती थी।

इसी अज्ञान और मिथ्या धारणाओं के कारण अनेक लोग सोचते हैं कि मिर्गी की कोई दवा या सफल उपचार नहीं है। मिर्गीग्रस्त अनेक युवा रोगियों को विवाह अथवा संतान प्राप्ति से रोका जाता है। ये सारी बातें न केवल सरासर झूठी हैं, बल्कि इनसे व्यक्ति को बहुत अधिक नुकसान पहुंचता है और ये मिर्गी को नियंत्रित करने के मार्ग में बाधक भी रही हैं।

मिर्गी निश्चित रूप से मस्तिष्क की एक बीमारी है। इस बात पर गंभीरता से विचार करने की जरूरत है कि ये मिथ्या धारणाएं और अंधविश्वास सदियों से हमारे समाज में कैसे इतनी गहरी पैठ बनाए हुए हैं। इन प्रक्रियाओं को समझने पर ही हमें इन पूर्वाग्रहों और अंधविश्वासों को दूर करने में मदद मिलेगी। चूंकि मिर्गी के अधिकांश दौरे क्षणिक होते हैं तथा कुछ मिनटों में स्वतः समाप्त हो जाते हैं, इसलिए झाड़-फूंक या जादू-टोने को अनावश्यक बल मिलता है। दौरों की झटकों वाली अवस्था में मरीज के हाथ पैरों में अतिरिक्त शक्ति आ गयी प्रतीत होती है क्योंकि एक से अधिक व्यक्ति भी उन्हें रोक नहीं पाते या दबा नहीं पाते। सोचा जाता है कि यह शक्ति किसी शैतानी स्रोत से प्राप्त हुई है तथा रोगी की आत्मा पर किसी अन्य की सत्ता हावी हो गयी है। थोड़े भिन्न तथा जटिल प्रकार के दौरों में मरीज आसपास की दुनिया से कुछ मिनटों के लिए कट जाता है, शून्य में ताकता है तथा कभी-कभी हिंसक भी हो जाता है। व्यवहार संबंधी इन परिवर्तनों को भी दुष्ट आत्माओं का परिणाम मान लिया जाता है। अतः यह अत्यंत महत्वपूर्ण है कि सामान्य व्यक्ति को वैज्ञानिक तरीके से शिक्षित किया जाये तथा इन मिथ्या धारणाओं, एवं अंधविश्वासों, अज्ञान आदि से छुटकारा दिलाया जाये। बीमारी के बारे में विज्ञानसम्मत एवं तथ्यपरक जानकारी से ही ये अंधविश्वास समाप्त हो पायेंगे। किसी भी समाज के लिए यह एक महानतम मानवीय सेवा होगी।

आनुवंशिकी

हाल के वर्षों में रोगों के उत्पन्न होने के कारणों को समझने में चिकित्सा-आनुवंशिकी का बहुत महत्वपूर्ण योगदान रहा है। विश्वभर में वंशानुगत रोगों की रोकथाम के प्रति लोगों की धारणा काफी बदली है और अब भी तेजी से बदल रही है। मिर्गी इसका अपवाद नहीं है। मिर्गी के आनुवंशिक पहलुओं अर्थात् परिवार के अन्य सदस्यों में उसके होने की संभावनाओं को लेकर अधिकांश युवा मरीज ऐसे पैने प्रश्न पूछते हैं कि उनका सटीक उत्तर देना कठिन हो जाता है। ऐसे प्रश्न पूछने पर उन्हें दोषी नहीं ठहराया जा सकता क्योंकि उनकी जीवन शैली का भविष्य उन्हीं प्रश्नों पर निर्भर करता है। अनेक शताब्दियों से यह जाना जाता रहा है कि मिर्गी के कुछ प्रकार आनुवंशिक रूप से प्रकट होते हैं। वंशानुगत मिर्गी के क्या प्रमाण हो सकते हैं ? प्रभावित परिवारों में मिर्गी के रोगियों की संख्या अधिक होती है। मिर्गी रोगियों की संतानों अथवा भाई-बहनों की ई.ई.जी जांच में बहुधा-असामान्यताएं मिलती हैं। दौरा आने की प्रवृत्ति कुछ परिवारों में अधिक हो सकती है। यहां इस बात पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि कुछ व्यक्तियों की ई.ई.जी. बीमारी होने के बावजूद सामान्य हो सकती हैं, जबकि अन्य स्वस्थ व्यक्तियों की ई.ई.जी. में मिर्गीनुमा खराबियां नजर आ सकती हैं। विभिन्न प्रकार के उद्दीपन जैसे कि थकान, तनाव, हारमोंस में परिवर्तन तथा शारीरिक व वातावरण संबंधी कारण ऐसे व्यक्तियों में दौरे के तात्कालिक कारण बन सकते हैं जिनमें मिर्गी की प्रवृत्ति वंशानुगत रूप से पहले से विद्यमान हो।

आनुवंशिकी की दृष्टि से ई.ई.जी. में आने वाली विशिष्ट तथा सामान्य किस्म की असामान्यताओं का अध्ययन किया गया है। काफी अधिक संख्या में (90 प्रतिशत) में समरूपी जुड़वां (एक अंडकोशिकीय) बच्चों में ई.ई.जी. समरूप

होती है, जबकि असमरूपी जुड़वां बच्चों (द्विअंडकोशिकीय) में यह प्रतिशत केवल 5 होता है। लगभग 75 प्रतिशत समरूपी जुड़वां रोगियों के ई.ई.जी. में मिर्गी रूपी खराबी देखी जाती है जबकि असमरूपी जुड़वां रोगियों के ई.ई.जी. में यह प्रतिशत सिर्फ 10 होता है। मिर्गी रोग के पैदा होने में आनुवंशिक कारकों के प्रभाव का यह एक अकाट्य प्रमाण है। इसी तरह मिर्गी के रोगी के सगे भाई-बहनों, संतानों तथा चचेरे, ममेरे, फुफेरे भाइयों के ई.ई.जी. में खराबी की काफी अधिक घटनाएं देखने में आती हैं हालांकि उनकी तीव्रता समरूपी जुड़वां बच्चों की तुलना में काफी कम होती है, चाहे इनमें मिर्गी के दौरे न पड़ते हों। रिश्तेदारों में सर्वव्यापी अथवा स्थानिक ई.ई.जी. असामान्यताएं प्रायः विद्यमान होती हैं, चाहे उन्हें दौरे आते हों या नहीं। लेकिन ई.ई.जी. असामान्यताओं की संख्या विभिन्न अध्ययनों में भिन्न पायी गयी है। लेकिन यह भाई-बहनों और संतानों की अपेक्षा अन्य रिश्तेदारों में कम पायी जाती है। यह मिर्गी के प्रकार पर भी निर्भर करता है। सर्वव्यापी मिर्गी (जनरलाइज्ड) में विकृति दर अधिक होती है बजाय सीमित स्थानिक (फोकल) मिर्गी के। आनुवंशिक अध्ययनों से यह निष्कर्ष निकलता है कि मिर्गी के रोगियों के सहोदर भाई-बहनों और उनकी संतानों में ई.ई.जी. की खराबी के महत्व का आकलन अत्यंत सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए। ई.ई.जी. किसी भी कारण से कराई जा सकती है, परंतु वास्तविक दौरे न आने की दशा में मिर्गीरोधी औषधियां देने की आवश्यकता नहीं होती है। कुल मिलाकर ई.ई.जी. की खराबी एक ऐसा आनुवंशिक लक्षण है जो एक से अधिक जीनों द्वारा निर्धारित होता है। इसके अपवाद बहुत कम हैं, जैसे कि मध्य-टेंपोरल खंड से उठने वाले तीव्र आवेश जिनमें संभवतः सिर्फ एक असरकारी जीन उत्तरदायी होती है।

जानकार लोगों के मत में इस विषय को लेकर बहुत मतभेद है कि मिर्गी में वंशानुगत प्रभाव को कितना महत्व दिया जाये। भाई-बहनों, संतान तथा जुड़वां बच्चों के अध्ययन से मिर्गी रोग में वंशानुक्रम के महत्व के बारे में कोई संदेह नहीं रह जाता है। मिर्गी रोगियों की संतानों में यह रोग होने की संभावना लगभग 10 प्रतिशत होती है, जबकि सामान्य जनता में यह दर लगभग 1 प्रतिशत है। पिता की अपेक्षा माता में मिर्गी रोग होने पर संतान में मिर्गी होने की संभावना बढ़ जाती है। यदि माता-पिता दोनों को मिर्गी हो तो यह संभावना थोड़ी और बढ़ जाती है। मिर्गी रोगी के सगे भाई-बहनों में यह रोग होने की संभावना (5 प्रतिशत) होती है जबकि सामान्य जनों में यह कम (1 प्रतिशत) होती है। जिन संतानों की माताओं को गर्भावस्था में मिर्गी के दौरे पड़े हों, उनमें बड़े होने पर

मिर्गी के दौरों की संभावना 2.5 गुणा अधिक होती है। इस प्रकार मिर्गीग्रस्त मां-बाप की संतानों की तुलना में सगे भाई-बहनों में मिर्गी के दौरों की संभावना कम होती है। परिवार में बड़े बच्चों को यह बीमारी होने की संभावना छोटे बच्चों से अधिक होती है। जुड़वां बच्चों के जोड़े में से यदि एक को मिर्गी हो तो दूसरे को यह रोग होने की कितनी संभावना होगी ? समरूपी (एक युग्मीय) जुड़वां बच्चों में यह दर 60 प्रतिशत तथा असमरूपी (द्वियुग्मज) जुड़वां बच्चों में यह दर 10 प्रतिशत होगी। जुड़वां बच्चों पर किए गये अध्ययन से ज्ञात होता है कि स्थानिक तथा लाक्षणिक मिर्गी विकार की तुलना में सर्वव्यापी मिर्गी तथा अज्ञात कारण वाली मिर्गी में आनुवंशिक प्रभाव अधिक गहरा होता है। कुल मिलाकर मिर्गी के लगभग 20 प्रतिशत रोगियों के परिवार में पहले भी यह रोग होने की जानकारी प्राप्त हुई है तथा लगभग 5 प्रतिशत रोगियों ने अपने सगे-संबंधियों में मिर्गी रोग होने की बात स्वीकार की है। कुछ प्रकार की मिर्गी जैसे कि बच्चों को होने वाली मायोक्लोनिक झटके वाली मिर्गी का पारिवारिक प्रतिशत और भी अधिक हो सकता है। यदि माता-पिता को सर्वव्यापी अथवा टॉनिक-क्लोनिक मिर्गी है तो बच्चे में उसके होने की आशंका 25 में एक, अर्थात् 4 प्रतिशत होती है। यदि माता या पिता में से एक तथा सगे भाई या बहन को मिर्गी हो तो इस रोग की संभावना बढ़कर दस में एक, अर्थात् 10 प्रतिशत हो जाती है। यदि माता-पिता दोनों को मिर्गी हो तो बच्चे में उसके होने की आशंका 8 में एक, अर्थात् 12 प्रतिशत होगी। आनुवंशिकी के अध्ययनों का एक महत्वपूर्ण निष्कर्ष यह भी है कि मिर्गी होने की आशंका अधिक होने के बावजूद ऐसे माता-पिता को संतानोत्पत्ति से नहीं रोका जाना चाहिए। परिवार में किस बच्चे को यह रोग होगा, इसकी भविष्यवाणी करने का फिलहाल कोई तरीका नहीं है। छोटे परिवार के इस आधुनिक युग में संभव है कि मिर्गी से पीड़ित माता-पिता के पहले एक-दो बच्चे स्वस्थ हों। इसलिए ऐसे माता-पिता के लिए संतानसुख न्यायसंगत है।

बच्चों में मिर्गी की दर (2 प्रतिशत) सामान्यतया वयस्कों (1 प्रतिशत) से अधिक है। 33 में से एक (3 प्रतिशत) बच्चों को ज्वर-जन्य दौरे पड़ सकते हैं। यदि परिवार में एक बच्चे को बुखारी दौरे पड़ते हैं तो दूसरे बच्चे में उसकी संभावना 20 प्रतिशत तक बढ़ जाती है। और यदि माता-पिता दोनों तथा एक बच्चे को ऐसे दौरे पड़ते हों तो अगले सहोदर बच्चे को इसकी संभावना 33 प्रतिशत होगी। ज्वर-जन्य दौरों से ग्रस्त बच्चों के सहोदर भाई-बहनों में ज्वर-जन्य दौरे पड़ने की दर काफी अधिक होती है परंतु हो सकता है कि आगे चलकर गैर ज्वर-जन्य

दौरों से ग्रस्त कुछ बच्चे गैर ज्वर-जन्य मिर्गी से प्रभावित हो जायें। ज्वर-जन्य दौरों से प्रभावित बच्चों में से लगभग 10 प्रतिशत आगे चलकर मिर्गी से ग्रस्त हो सकते हैं। इस प्रकार ज्वर-जनित दौरों में आनुवंशिक कारणों की एक निश्चित भूमिका होती है। प्रकाश संवेदी मिर्गी के संदर्भ में भी ऐसा आनुवंशिक प्रभाव देखा जाता है।

मिर्गी के संबंध में वंशानुगति की प्रवृत्ति प्रायः बहुजीनयुक्त (एक से अधिक जीन द्वारा नियंत्रित) मानी जाती है। कुछ मामलों में एकाकीजीन (जो अलिंग गुणसूत्र पर स्थित हो) निर्णायक हो सकती है। यह जीन प्रबल अथवा अप्रबल (डामिनेंट/रीसेसिव) हो सकती है। मिर्गी की प्रवृत्ति किस तरह एक पीढ़ी से दूसरी में आती है, यह अभी भी अज्ञात है। जैसा कि क्रियाविधि अध्याय में बताया गया है, कार्टेक्स (प्रांतस्था) की बढ़ी हुई उद्दीप्तता, जो स्थानीय अथवा स्थानिक तथा सर्वव्यापी दोनों प्रकार की मिर्गी में पड़ने वाले दौरों के लिए आवश्यक होती है, शरीर रचनात्मक, शरीर क्रियात्मक अथवा जैव रासायनिक परिवर्तनों से उत्पन्न हो सकती है। मिर्गी रोग के खतरे वाली आबादी में ये परिवर्तन मात्रात्मक आनुवंशिक नियंत्रण में हो सकते हैं। एच एल ए अथवा हिस्टोकंपेटिबिलिटी प्रतिजनों का उपयोग उन व्यक्तियों को पहचानने में सहायक हो सकता है जिनमें मिर्गी, सामान्य व्यक्तियों की तुलना में, होने की आशंका अधिक हो। उदाहरण के लिए एच. एल. ए.ए-9 नामक एंटीजन मिर्गी की संभावना वाले व्यक्तियों में 16 गुणा अधिक पाया गया। जीन संबंधों की तकनीकी अब उपलब्ध है, जिससे उस जीन को पहचाना जा सकता है जो मिर्गी रोग की संभावना को बढ़ावा देती है। एक बार जीन की पहचान हो जाने पर डी. एन. ए. पुनर्संयोजन तकनीक द्वारा उक्त जीन द्वारा नियंत्रित प्रोटीन को जाना जा सकता है, तथा भविष्य में उसकी संरचना में परिवर्तन करके मिर्गी के दौरों पर नियंत्रण करने के प्रयास भी किए जा सकते हैं। बहुत बार मिर्गी की वंशानुगति को लेकर उठने वाले सभी प्रश्नों का उत्तर देना चिकित्सक के लिए बहुत कठिन होता है। मेरी राय है कि मिर्गी की किस्म तथा ई.ई.जी. की खराबी का स्वरूप जान लेने के बाद रोगी को अधिक से अधिक जानकारी देने का प्रयत्न करना चाहिए। लेकिन इससे प्रभावित माता-पिता को संतान सुख प्राप्त करने से वंचित रहने की सलाह देना उचित नहीं है।

मिर्गी की क्रियाविधि

मिर्गी केंद्रीय तंत्रिका तंत्र (मस्तिष्क) की आम बीमारियों में से एक है। समाज में प्रति हजार आबादी में 5-10 व्यक्ति मिर्गी से ग्रस्त होते हैं। बच्चों में यही संख्या 20 से 30 प्रति हजार हो सकती है। यह रोग सदियों से मानव के साथ है, परंतु इसका कारण ठीक से नहीं समझा जा सका है। हालांकि हाल के कुछ वर्षों में इसकी क्रियाविधि के बारे में हमारी समझ बढ़ी है, तथा प्रयत्न लगातार जारी हैं कि इसे और बारीकी से समझा जाये।

मिर्गी या तो मस्तिष्क के किसी सीमित सुनिश्चित क्षेत्र में आरंभ हो सकती है (फोकल) या आरंभ से ही सर्वव्यापी (जनरलाइज्ड) हो सकती है। स्थानिक (फोकल) मिर्गी की क्रियाविधि समझने के लिए दो प्रकार की मस्तिष्क कोशिकाओं की कल्पना कीजिए। एक प्रकार की कोशिकाओं को उत्तेजक न्यूरान तथा दूसरी प्रकार की कोशिकाओं को निरोधी न्यूरान (तंत्रिका) कहा जाता है। दोनों प्रकार की तंत्रिका कोशिकाओं में कोई संरचनात्मक भेद नजर नहीं आता। सामान्य परिस्थितियों में दोनों प्रकार की तंत्रिका कोशिकाओं द्वारा पैदा किए गये विद्युतीय विभव एक दूसरे को संतुलित रखते हैं। उत्तेजक कोशिकाओं द्वारा जनित विभव यदि अधिक मात्रा में इकट्ठा हो जाएं तो एक लघु विस्फोट का कारण बनते हैं। इस विस्फोट की शुरुआत तंत्रिका कोशिकाओं की किसी चोट, किसी बीमारी या किसी रसायन के कारण अथवा आनुवंशिक कारणों से हो सकती है। जब उत्तेजक तंत्रिका कोशिकाएं मस्तिष्क के आसपास के हिस्सों में अपने जैसी अन्य उत्तेजक कोशिकाओं को समान विद्युतीय घटनाक्रम में शामिल कर लेती हैं तो विस्फोट का आकार बढ़ते-बढ़ते एक क्रांतिक स्तर पर पहुंच जाता है और तब मिर्गी का दौरा पड़ता है। यदि यह विस्फोट आसपास की एक जैसी उत्तेजक कोशिकाओं

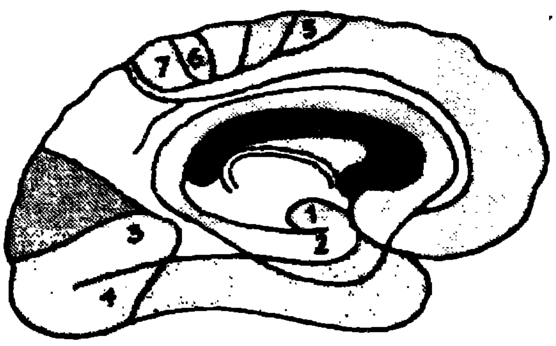
को एक साथ न जोड़ जाने के कारण अधिक न बढ़कर सीमित ही रह जाये और दौरे का रूप न ले पाये तब भी ई.ई.जी. रिकार्ड में यह स्पाईक या शूक के रूप में देखी जा सकती है। इस प्रकार की घटना के लिए आवश्यक है कि बड़ी संख्या में उत्तेजक तंत्रिका कोशिकाएं विद्युत गतिविधि में ऊंचे दर्जे की समक्रमिकता कर लें। ऐसे अवसरों पर ई.ई.जी. में उच्च आयाम वाले शूक व तरंग पैदा होते हैं जो अत्यंत समक्रमिक (अर्थात् एक साथ घटित होने वाले) होते हैं। शूक व तरंगों के ये असामान्य ई.ई.जी. विस्फोट, न केवल दौरों के समय बल्कि उनके बीच-बीच में भी रिकार्ड किए जा सकते हैं। उत्तेजक तंत्रिका कोशिकाओं की विद्युतीय गतिविधि बढ़ने पर निरोधी कोशिकाएं भी सक्रिय हो उठती हैं। मिर्गी के दौरे को समाप्त करने में इन निरोधी तंत्रिका कोशिकाओं की मुख्य भूमिका रहती है। इसके अतिरिक्त उत्तेजक कोशिकाओं की चयापचयी थकान भी दौरा समाप्त करने का कारण मानी जाती है। सामान्य परिस्थितियों में उत्तेजक कोशिकाओं से मिर्गी वाली विस्फोटक विद्युत सक्रियता नहीं उठती है क्योंकि निरोधी कोशिकाओं से जुड़े हुए परिपथ उन्हीं उत्तेजक कोशिकाओं को तत्काल शांत कर देते हैं।

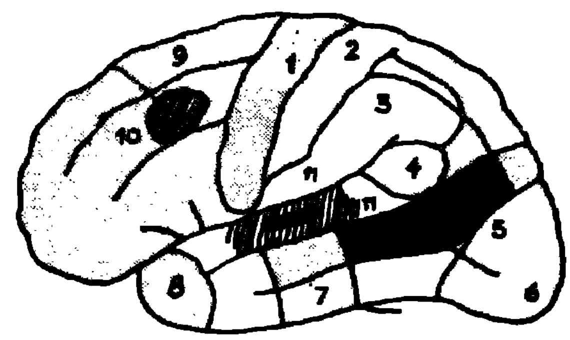
मस्तिष्क के विभिन्न भागों में मिर्गी रूपी सक्रियता का पैदा होना उन भागों की अलग-अलग विशिष्ट गुणवत्ता पर निर्भर करता है। अलग-अलग व्यक्तियों में यह सक्रियता अलग-अलग होती है। विद्युत विस्फोटों के उत्पन्न होने और उनके प्रसार में कैल्शियम पोटैशियम और सोडियम की प्रमुख भूमिका होती है। विभिन्न बीमारियां, न्यूरान कोशिकाओं में रचनात्मक व कार्यात्मक परिवर्तन द्वारा उन्हें मिर्गी-जनिक बना देती हैं। यह पता है कि मस्तिष्क में उपस्थित कुछ रसायन जैसे कि न्यूरोपप्टाइड व गामा अमीनोब्यूटाइरिक एसिड अथवा गाबा आदि न्यूरान कोशिकाओं को प्रभावित करते हैं। मस्तिष्क कोशिकाओं की झिल्लीनुमा दीवारों की रचना में जन्मजात या बाद में आने वाली विकृतियों से भी उद्दीप्तता प्रभावित होती है। निरोधी या दमनकारी कोशिकाओं की गतिविधि घट जाने से दौरे पड़ सकते हैं। उपर्युक्त प्रक्रियाओं में से अनेक या तो दौरे के प्रति संवेदनशीलता को बढ़ाती हैं या दौरे को जन्म देती हैं अथवा उसके फैलाव को रोकती हैं। प्रायोगिक जंतुओं में प्रयोगों द्वारा मस्तिष्क के विभिन्न भागों पर रसायनों के प्रभाव या विद्युत उद्दीपन से सीमित मिर्गी-जनिक क्षेत्र बनाए जा सकते हैं। इन क्षेत्रों की ई.ई.जी. भी असामान्य होती है। ऐसे मिर्गी-जनिक क्षेत्र को प्राथमिक उद्गम केंद्र (फोकस) कहते हैं। तीन से दस माह की अवधि में मस्तिष्क के दूसरे आधे भाग में समतुल्य स्थान पर दूसरा फोकस विकसित हो जाता है। एक बार दूसरा फोकस बन जाने

के बाद यदि प्राथमिक फोकस से उसका संबंध काट भी दिया जाए, तो भी वह समाप्त नहीं होता है। प्राथमिक फोकस बनने के पूर्व अथवा तत्काल बाद इन संपर्क धागों को यदि काट दिया जाए तो द्वितीय फोकस नहीं बनता है। फिनोबारबीटोन नामक औषधि द्वितीय फोकस बनने से रोकती है। मनुष्य में किसी भी मिर्गी-जनिक फोकस से एक द्वितीयक फोकस उत्पन्न हो सकता है। कुछ बीमारियों में (जैसे कि सिर की चोट, मस्तिष्क के संक्रमण तथा कुछ क्षयकारी व चयापचयी परिस्थितियों में) एक साथ कई प्राथमिक फोकस बन जाते हैं, जिन्हें द्वितीयक फोकस जैसा नहीं माना जाना चाहिए।

उपरोक्त तथ्यों से यह समझा जा सकता है कि फोकल या स्थानिक मिर्गी के चिकित्सीय लक्षण इतने अलग-अलग हो सकते हैं। मस्तिष्क के विभिन्न भागों से बोलना, देखना, सूंघना, सुनना, चलना तथा भावनाएं और व्यवहार जैसी अलग-अलग गतिविधियों का नियंत्रण होता है (चित्र 1)। मस्तिष्क के कौन से हिस्से की गतिविधि प्रभावित या बिलकुल समाप्त हुई है, यह इस बात पर निर्भर करेगा कि मिर्गी-जनिक फोकस कहां से प्रारंभ होगा। इसे मिर्गी के दौरे का वर्णन सुनकर भी जाना जा सकता है। कभी-कभी उक्त फोकस या विकार स्थान से उठने वाला विद्युतीय विस्फोट अत्यंत तीव्रता से सर्वव्यापी हो जाता है। ऐसी परिस्थिति में रोगी द्वारा दौरे के वर्णन से उक्त फोकस क्षेत्र द्वारा नियंत्रित गतिविधि की गड़बड़ी का अनुमान लगाना संभव नहीं होता। हालांकि ई.ई.जी. में उस स्थानीय विद्युत विस्फोट का पता चल सकता है। इस तरह हम पाते हैं कि मस्तिष्क के क्षेत्र विशेष की दौरेनुमा गतिविधि या तो पूरी तरह मस्तिष्क की गहराइयों में दबी रह सकती है या एक भाग में फैल कर हल्का दौरा पैदा कर सकती है, अथवा मस्तिष्क के दोनों भागों में फैलकर बेहोशी वाला बड़ा दौरा पैदा कर सकती है (चित्र 2)।

मिर्गी के दूसरे प्रकार के दौरे व्यापक प्रभाव वाले होते हैं। इनमें दौरे आरंभ होने के समय से ही मरीज बेहोश हो जाता है। इनकी कार्यविधि समझना और भी कठिन है। मस्तिष्क के दो गोलार्धो के भीतरी हिस्सों में तंत्रिका कोशिकाओं के बड़े-बड़े समूह होते हैं। इनमें से सबसे बड़े समूह को 'थेलेमस' कहते हैं। थेलेमस का कार्य है पूरे शरीर से ज्ञान-इंद्रियों द्वारा प्राप्त संवेदनाओं-सूचनाओं को मस्तिष्क के सर्वोच्च भाग प्रमस्तिष्क कार्टेक्स या 'प्रांतस्था' तक पहुंचाना। पीड़ा, स्पर्श, तापमान जैसी कुछ संवेदनाओं का अहसास थेलेमस के माध्यम से होता है जबकि अन्य प्रकार की संवेदनाओं की अनुभूति के लिए प्रमस्तिष्क कार्टेक्स की





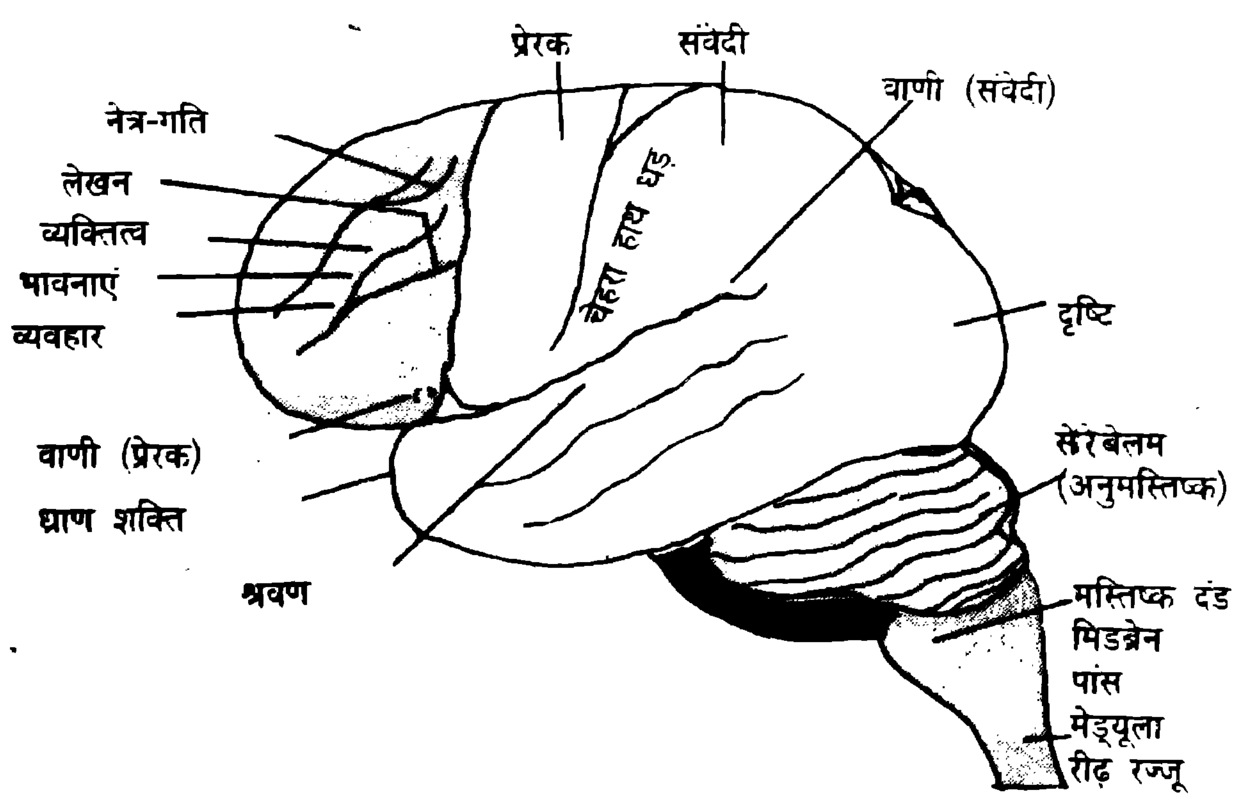
आंतरिक दृश्य

1. घ्राण केंद्र
2. घ्राण स्मृतियां
3. दृश्य केंद्र
4. दृश्य-मानसिक संसर्गों का क्षेत्र
5. प्रेरक क्षेत्र
6. शरीर-संवेदी क्षेत्र
7. शरीर-संवेदी मानसिक क्षेत्र

बाह्य दृश्य

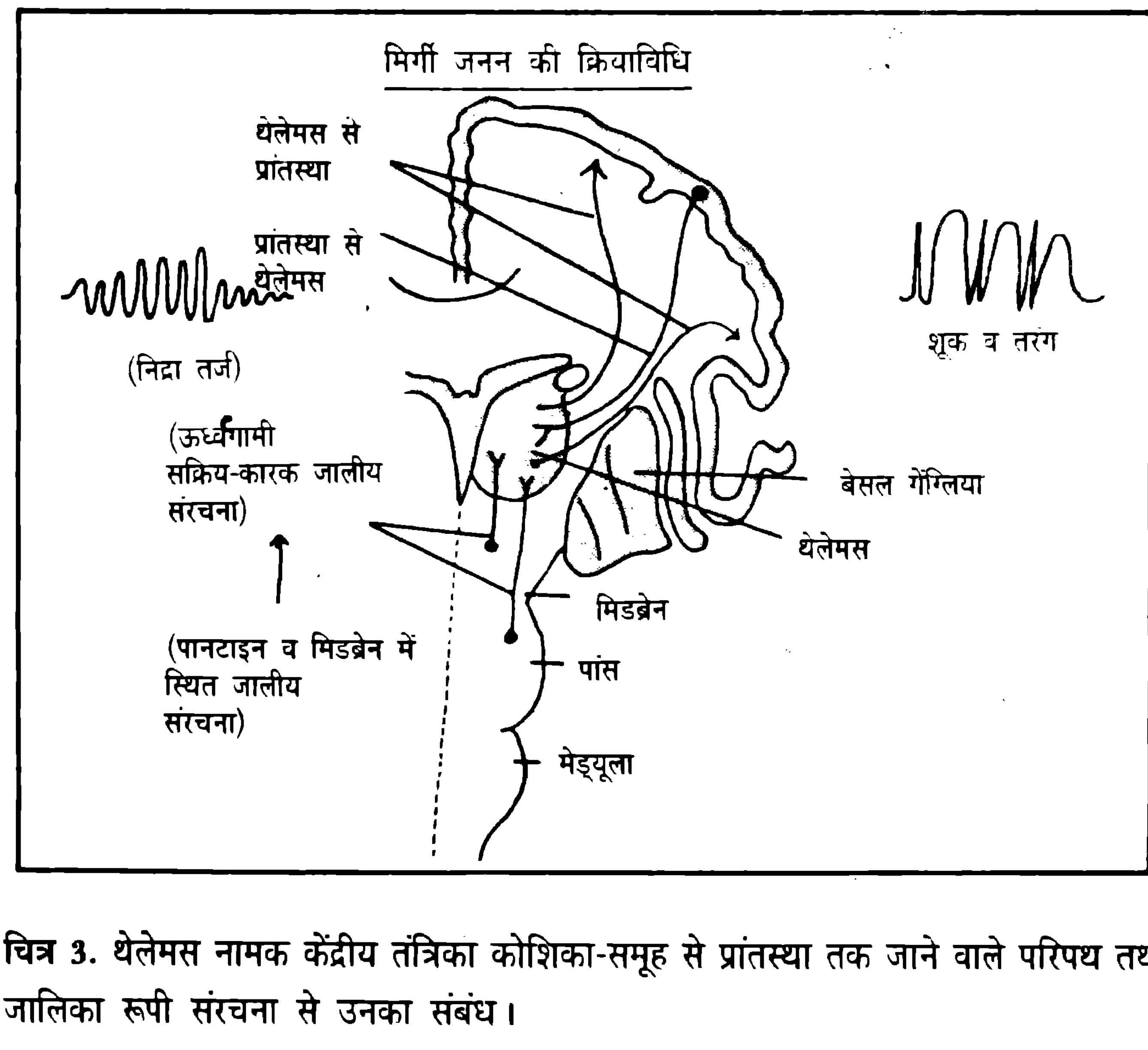
1. प्रेरक क्षेत्र
2. शरीर- संवेदी मानसिक क्षेत्र
3. स्पर्श-स्मृतियां
4. वाणी-दृश्य क्षेत्र
5. दृश्य-मानसिक संसर्गों का क्षेत्र
6. दृश्य क्षेत्र
7. स्वाद क्षेत्र
8. मनोप्रेरक क्षेत्र
9. चित्रण क्षेत्र
10. श्रव्य क्षेत्र
11. वाणी-श्रव्य क्षेत्र

चित्र 1. मस्तिष्क के संवेदी व प्रेरक क्षेत्रों को दर्शाने वाला रेखाचित्र।



चित्र 2. मस्तिष्क द्वारा सम्पादित कुछ महत्वपूर्ण कार्य व कार्यस्थल.

आवश्यकता पड़ती है (चित्र 3)। थेलेमस को सूचनाएं कार्टेक्स से प्राप्त होती हैं। थेलेमस व कार्टेक्स का यह उभय-मार्गीय संबंध हमारी जागृत व नींद की अवस्थाओं को नियंत्रित करता है। थेलेमस की तंत्रिका कोशिकाओं की विद्युत गतिविधि में प्रायः ऊंचे दर्जे की समक्रमिकता देखी जाती है। सामान्य परिस्थितियों में ये समक्रमिक तरंगें उस क्रांतिक स्तर पर नहीं पहुंचतीं कि मिर्गीनुमा शूक व तरंग (स्पाईक-वेव) पैदा हो जायें। वे तब पैदा हो सकते हैं जब या तो समूचा कार्टेक्स उत्तेजित अवस्था में हो या निरोधी गतिविधियां कम हो गयी हों। जागृत अवस्था स्तर का भी मिर्गीजनक गतिविधि पर असर पड़ता है। यदि किन्हीं कारणों से कार्टेक्स की तंत्रिका कोशिका स्वयं असामान्य विद्युतीय शूक पैदा करने लग जाये तो उन पर थेलेमस की कोशिकाओं का उद्दीपन वाला प्रभाव अधिक असर दिखाता है। कुछ प्रायोगिक जन्तु माडलों में पेंसिलीन के प्रभाव से कार्टेक्स की उद्दीपनशीलता बढ़ जाने से विद्युतीय शूक व तरंग पैदा होने लगते हैं। इसके फलस्वरूप कार्टेक्स की कोशिकाओं पर थेलेमस के उद्दीपन का अधिक प्रभाव दिखाई देता है। प्रत्येक उत्तेजक अवस्था के तुरंत बाद निरोधक गतिविधियां भी



चित्र 3. थेलेमस नामक केंद्रीय तंत्रिका कोशिका-समूह से प्रांतस्था तक जाने वाले परिपथ तथा जालिका रूपी संरचना से उनका संबंध।

सक्रिय होती हैं। इसी दौरान छोटे आकार के शूक व तरंग पैदा होते हैं। निरोधक अंतर्तंत्रिका प्रणाली के बार-बार सक्रियकरण से निरोधक अवधि पैदा होती है। कार्टेक्स की बढ़ी हुई क्रियाशीलता आमतौर पर उच्च अवसीमा की अंतःकार्टिकल निरोधक प्रणाली को भी क्रियाशील बना देती है। बार-बार निरोध न होना संभवतः मिर्गी के दौरों और झटकों को जन्म देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। निरोधी गतिविधियां भी इसी दौरान सक्रिय होती हैं। प्रत्येक तंत्रिका कोशिका निरोधी कोशिकाओं के एक जाल से जुड़ी रहती है। शूक और तरंग पैदा होने के लिए इस प्रणाली का निष्क्रिय होना आवश्यक होता है।

थेलेमस व् कार्टेक्स के इस सामान्य उभयमार्गी नियामक तंत्र के भंग हो जाने से कार्टेक्स अति उद्दीपनशील हो सकता है। यह गड़बड़ी रचनात्मक, कार्यात्मक या जैवरासायनिक हो सकती है। ये परिवर्तन वंशानुगत भी हो सकते हैं और अज्ञात कारणों से उत्पन्न होने वाली व्यापक अथवा सर्वव्यापी मिर्गी का कारण भी हो सकते हैं। रचनात्मक, कार्यात्मक तथा जैवरासायनिक परिवर्तन बहुत सूक्ष्म हो सकते हैं तथा रोजमर्रा के परीक्षणों के दौरान इनका पता भी नहीं चल सकता है। विकार स्थानिक या सर्वव्यापी मिर्गी की क्रियाविधि की यह सरल व्याख्या दौरो के रूप में पाई जाने वाली अत्यंत विविधता को नहीं समझा सकती।

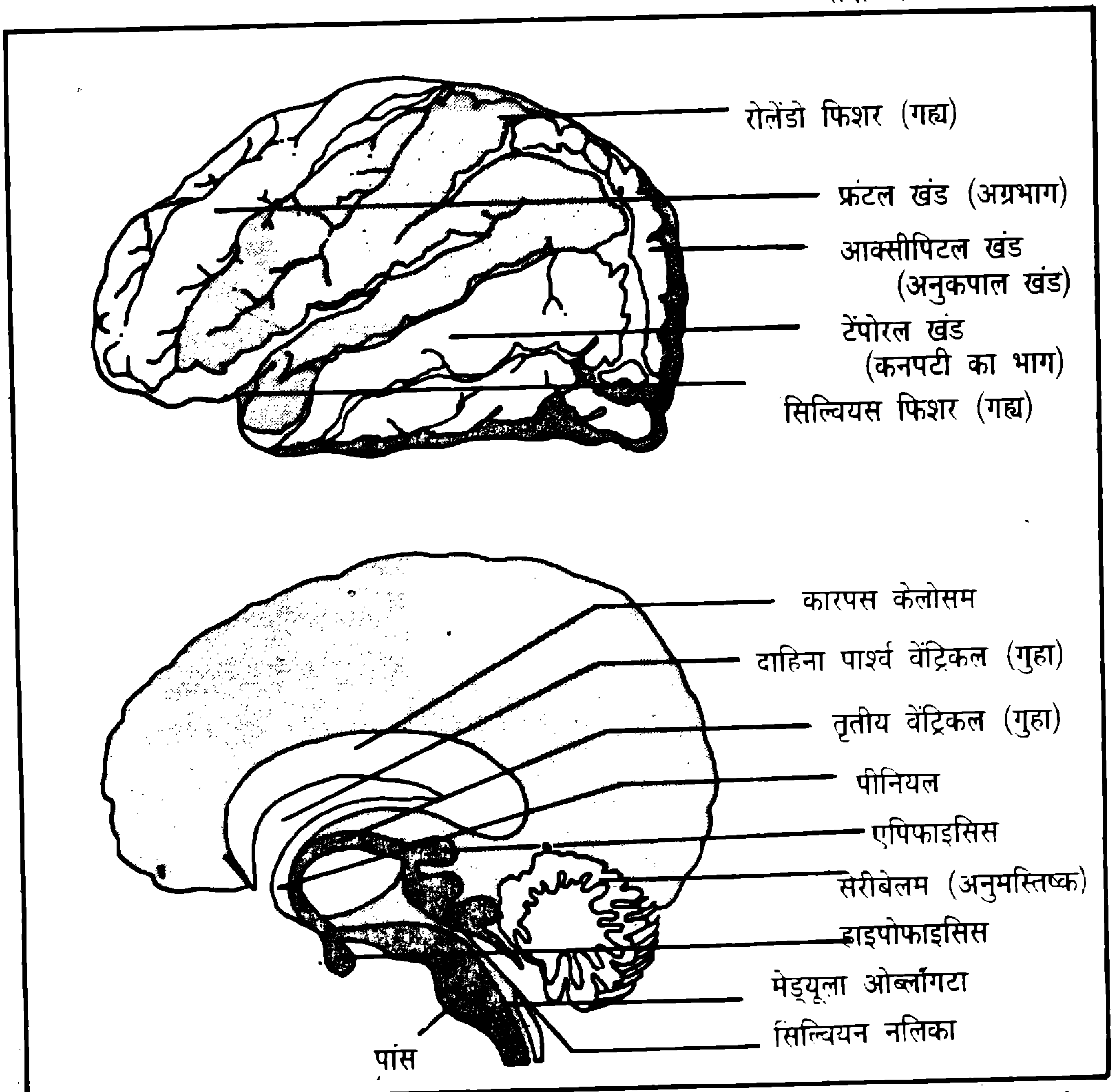
दौरों के प्रकार

मिर्गी के अनेक रूप हैं, लेकिन समाज में प्रायः एक मुख्य प्रकार (ग्रांडमाल) को आसानी से पहचाना जाता है क्योंकि वह तीव्र नाटकीय व एक विशेष प्रकार की होती है। विभिन्न प्रकार के दौरों का स्वरूप भिन्न-भिन्न होता है और मुख्य रूप से दो आवश्यक विशिष्टताओं पर निर्भर करता है—(क) मूल कारण-गत बीमारी पर, (ख) मस्तिष्क के उस हिस्से पर जहां से दौरा आरंभ होता है तथा फैलता है। रोगहेतुकी-विज्ञान की दृष्टि से मिर्गी को दो प्रमुख वर्गों में विभाजित किया जा सकता है : (1) प्राथमिक अथवा अज्ञात-कारण वाली सर्वव्यापी मिर्गी, (2) द्वितीयक अथवा लाक्षणिक मिर्गी। प्राथमिक सर्वव्यापी किस्म की मिर्गी में मूल विकृति शायद पूरे मस्तिष्क को प्रभावित करती है और किसी एक स्थान पर सीमित नहीं होती। इस विकृति की उत्पत्ति आमतौर पर आनुवंशिक अथवा शरीर-रचनात्मक होती है और इसमें हलके दौरे पड़ते हैं। किन्हीं-किन्हीं कारणों से दौरा पड़ने की संवेदनशीलता बढ़ जाती है। यह विकृति सामान्यतः दिखाई नहीं पड़ती और आम जांच आदि में किसी विकृति का पता नहीं चलता है। जैसा कि क्रियाविधि अध्याय में बताया गया है कि यह विकार विद्युत शरीर क्रियात्मक तंत्रिका कोशिका संगठन से पैदा होती है और ई.ई.जी. जांच से इसका पता चलता है। लाक्षणिक या द्वितीयक प्रकार की मिर्गी मस्तिष्क के भीतर किसी स्थान पर विकृति आने से होती है। इस विकृति से पूर्व इन व्यक्तियों का मस्तिष्क मिर्गी के दौरों के प्रति अतिरिक्त रूप से संवेदनशील नहीं होता है। इस लाक्षणिक वर्ग में अनेक खराबियां ठीक हो जाने वाली किस्म की होती हैं, उदाहरण के लिए बुखार, सिर की चोट, कुछ प्रकार की जैव रासायनिक अथवा चयापचयी असंतुलन आदि। इन परिस्थितियों के ठीक हो जाने पर आगे और दौरे आने की आशंका नहीं रहती तथा इन मरीजों

को लंबे समय तक मिर्गी की औषधियां नहीं लेनी पड़तीं। लेकिन ऐसी ही तथा अन्य कुछ बीमारियां कभी-कभी मस्तिष्क के किसी हिस्से में संरचनात्मक विकृति पैदा कर सकती हैं। न ठीक होने वाली ऐसी विकृति कुछ अंतराल के बाद मिर्गी-जनित फोकस बन जाती है, जिसका लाक्षणिक मिर्गी के समान उपचार आवश्यक हो जाता है।

फोकस या विकार-स्थान मस्तिष्क की करोड़ों तंत्रिका कोशिकाओं में से एक छोटा-सा समूह है, जो अपनी असामान्य विद्युत सक्रियता के कारण मिर्गी के दौरे पैदा करता है। इस प्रकार के दौरों को आंशिक (पार्शियल) भी कहा जाता है। इन दौरों को आंशिक कहना अधिक उपयुक्त होगा क्योंकि एक स्थान विशेष से उत्पन्न होने के बावजूद एक नैदानिक किस्म के दौरे को प्रसार के लिए तंत्रिका कोशिकाओं के जाल की आवश्यकता पड़ती है। इस प्रकार के विकार-स्थान या फोकस जानवरों के मस्तिष्क में प्रयोग द्वारा बनाए जा सकते हैं। मस्तिष्क में भौतिक, रासायनिक अथवा विद्युतीय उद्दीपन द्वारा ऐसे फोकस बन जाते हैं। मस्तिष्क के सभी भाग उद्दीपन के प्रति एक जैसी संवेदनशीलता नहीं रखते।

मस्तिष्क के कुछ अधिक संवेदनशील क्षेत्र जैसे कि टेंपोरल अथवा कनपटी के हिस्से (चित्र 4) को लंबे समय तक बार-बार विद्युत उद्दीपन देने से वहां मिर्गी जनक विकार-स्थान उत्पन्न हो जायेगा। इस प्रकार फ़ोकल किस्म की मिर्गी मस्तिष्क के एक हिस्से की विद्युत अति-सक्रियता की द्योतक है। मनुष्य में फोकल मिर्गी मस्तिष्क के विकास में किसी रचनात्मक त्रुटि, पुरानी चोट, संक्रमण ट्यूमर, कैंसर चयापचयी विकार तथा रक्त प्रवाह की बीमारियों से पैदा हो सकती है। आंशिक मिर्गी में विकार-स्थान को पहचान पाना अथवा दिखा पाना सदैव संभव नहीं होता। चित्र 2 में मस्तिष्क के विभिन्न भागों के कार्य दर्शाये गये हैं। यह फोकस की स्थिति पर निर्भर करेगा कि वहां से उठने वाले दौरे के समय मरीज में क्या-क्या लक्षण प्रकट होंगे। मरीज व उनके रिश्तेदार कभी-कभी इन लक्षणों पर ध्यान नहीं देते या वे इन्हें इतना गौण समझते हैं कि डाक्टर को बताते नहीं। फोकस से उठने वाले इन लक्षणों व दौरों के सर्वव्यापी हो जाने के बीच का अंतराल कभी-कभी इतना कम रहता है कि एक जानकार व्यक्ति ही उन आरंभिक लक्षणों को जान पाता है और उन्हें लिख पाता है। इस प्रकार की परिस्थितियों में ई.ई.जी. की जांच से फोकस या विकार-स्थान की विकृति को जाना जा सकता है। एक बार ई.ई.जी. सामान्य आने पर बार-बार करते हैं व कुछ नयी तकनीकें अपनाते हैं। लक्ष्य रहता है कि मिर्गी के मरीजों में से अधिकांश में फोकस या विकार-स्थान



चित्र 4. ऊपर : मानव मस्तिष्क के बाह्य भाग का दृश्य। नीचे : मस्तिष्क का ऊर्ध्व-विच्छेदन, कुछ आंतरिक रचनाओं को दर्शाया जा रहा है।

का पता लगाने में कोई चूक न हो जाये। मस्तिष्क का कार्टेक्स या सब-कार्टिकल संरचनाएं इन आंशिक दौरों का स्रोत हो सकती हैं। इलाज का प्रकार व सफलता की संभावनाएं कुछ हद तक इसी निष्कर्ष पर निर्भर करती हैं। फोकस या विकार-स्थान टेंपोरल खंड में सबसे अधिक संख्या में पाए जाते हैं। उसके बाद ये अग्रभाग (फ्रंटल), पार्श्व भाग (पेराइटल), अनुकपाल खंड (आक्सीपिटल) तथा अधोप्रांतस्था में हो सकते हैं।

सभी आंशिक या फोकल दौरे एक ओर तक सीमित नहीं रहते। अनेक बार वे सर्वव्यापी हो जाते हैं। इस प्रकार की मिर्गी को 'आंशिक मिर्गी' का द्वितीयक सर्वव्यापीकरण कहते हैं। यदि इस प्रकार की मिर्गी में फोकस से उठने वाले आरंभिक लक्षणों को नहीं पहचाना जाये तो प्राथमिक सर्वव्यापी मिर्गी के समान लगते हैं।

इस प्रकार की मिर्गी में वे दौरे भी शामिल होते हैं जो विसरित तंत्रिका

तंत्रीय रोगों से संबंधित होते हैं। मिर्गीजनक फोकस के उद्भव के स्थानीय लक्षण द्वितीयक सर्वव्यापक मिर्गी के रूप में व्यक्त हो सकते हैं और द्वितीयक व्यापकता युक्त आंशिक मिर्गी जैसे लग सकते हैं। अतः द्वितीयक सर्वव्यापक मिर्गी के दौरे अक्सर आंशिक अथवा पेशीय जैसे अनेक प्रकार के दौरों के रूप में व्यक्त हो सकते हैं। दस तरह के दौरे मस्तिष्क के संचयी रोग, जन्मजात चयापचयी रोग तथा विषाणुज मस्तिष्क शोथ दिखाई देते हैं। अतः मिर्गी को निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है :

1. प्राथमिक या अज्ञात कारण/सर्वव्यापी मिर्गी
   - ग्रांडमाल, टानिक-क्लानिक, तनाव व झटके वाले बड़े दौरे,
   - पतीतमाल, एबसेंस, लघु दौरे
   - पेशीय झटके, मायोक्लोनिक
2. आंशिक दौरे
   - 'आंशिक सामान्य'—होश बना रहता है
     प्रेरक व संवेदी
   - आंशिक जटिल-चेतन' बोध या होश नहीं बना रहता। प्रायः कनपटी वाले खंड, अग्रभाग अथवा लिम्बिक क्षेत्र की मिर्गी
3.
   - आंशिक दौरे का द्वितीयक सर्वव्यापीकरण
   - द्वितीयक सर्वव्यापी मिर्गी : मस्तिष्क की बहुत सारी कोशिकाओं में विकृति फैली रहती है। एक से अधिक प्रकार के दौरे आते हैं। कुछ दुर्लभ बीमारियों में कोशिकाओं का क्रमिक क्षय होता है अथवा उनमें चर्बीनुमा रसायन जमा हो जाता है।

मिर्गी का वर्गीकरण और भी दूसरे आधारों पर किया गया है जिनमें इसकी हेतुकी, विकृति विज्ञानी क्षत, चिकित्सीय गुणों, (विद्युत प्रमस्तिष्क लेखन), असामान्यताओं, उपचार की सफलता तथा बीमारी के भविष्यफल को शामिल किया गया है। अनेक उदाहरणों में मिर्गी के चिकित्सीय स्वरूप में ये कारण मिले-जुले रूप में शामिल दिखाई देते हैं। कोई भी एक वर्गीकरण मिर्गी के समस्त आयामों को अपने में शामिल नहीं कर पाता तथा उसमें कमियां रह जाती हैं। सर्वव्यापी मिर्गी का प्रमुख गुण है कि पूरे शरीर अर्थात् दोनों भागों (दाएं-बाएं) पर इसका प्रभाव पड़ता है व रोगी बेहोश हो जाता है। आंशिक मिर्गी में होश कायम रहता है व लक्षण शरीर के किसी एक भाग में (दाएं या बाएं) दिखाई देते हैं। आंशिक जटिल मिर्गी में रोगी बेहोश तो नहीं होता है, परंतु सामान्य

भी नहीं रहता है। कुछ व्यक्ति बड़ा दौरा, छोटा दौरा जैसी शब्दावली का प्रयोग करते हैं जो कि ठीक से परिभाषित नहीं है और महज दौरों की तीव्रता को प्रदर्शित करते हैं।

उपरोक्त वर्गीकरण मिर्गी के दौरों के प्रकार पर आधारित है। मिर्गी के इस प्रकार के वर्गीकरण में रोग के कारण, रोग को प्रभावित करने वाले कारकों, दौरों की तीव्रता, आरंभ होने की उम्र व बाद की संभावनाओं आदि तथ्यों के बारे में कोई जानकारी नहीं मिलती। वर्ष 1988 में उक्त पहलुओं को शामिल करते हुए नया वर्गीकरण स्वीकृत किया गया जिसे 1989 में प्रकाशित किया गया। 'मिर्गी रोग संकुल' या 'सिंड्रोम' की अवधारणा विकसित हुई ताकि विचारों का आपसी आदान-प्रदान अधिक विज्ञान-सम्मत हो सके। 'मिर्गी-संकुल' उस अवस्था को कहते हैं जिसमें मरीजों के एक समूह में रोग के मिलते-जुलते अनेक लक्षण व चिह्न पाए जाते हैं। इस वर्गीकरण में भी फिलहाल कमियां हैं। समय के साथ रोग का स्वरूप बदलने से मरीज एक सिंड्रोम के स्थान पर अन्य संकुल के साथ पहचाना जा सकता है। आगे चलकर रोग क्या रूप लेगा इसे जानकारी के अभाव में आरंभिक अवसर पर संकुल की सही पहचान बता पाना अनेक बार संभव नहीं हो पाता।

वर्तमान वर्गीकरण इस प्रकार है :

1. स्थानीयता-संबद्ध (आंशिक) मिर्गी रोग-संकुल
   - अज्ञात कारण
   - लाक्षणिक
   - क्रिप्टोजनिक (गूढ़)
2. सर्वव्यापी मिर्गी-रोग और संकुल
   - अज्ञात कारण
   - गूढ़
   - लाक्षणिक

   (1) विशिष्ट संकुल

   (2) अविशिष्ट कारण
3. मिर्गी-रोग संकुल जिनके बारे में यह तय करना मुश्किल हो कि वे स्थानीय हैं या सर्वव्यापी
4. विशिष्ट संकुल जैसे ज्वर-जन्य दौरे

वर्णन की दृष्टि से सभी दौरों की तीन अवस्थाएं बताई जा सकती हैं– (1) पूर्व दौर (दौरे के पहले के कुछ क्षण), (2) *दौर* (स्वयं दौरा), (3) *पश्च दौर*

(दौरे के पश्चात् के कुछ मिनट)। हालांकि सभी मामलों में ये तीनों अवस्थाएं देखने को नहीं मिलतीं। परंतु रोगी के रिश्तेदारों तथा उसे देखने वाले अन्य व्यक्तियों के लिए मिर्गी के दौरे के दौरान इन तीनों अवस्थाओं पर गौर करना जरूरी होता है। इस बात पर बार-बार बल देना अनावश्यक है कि दौरे के सटीक वर्णन से बीमारी की शत-प्रतिशत पहचान हो जाती है। यदि दौरे से संबंधित सूचनाएं दर्ज करने में इन तीनों अवस्थाओं का ध्यान रखा गया हो तो इसके बहुत अच्छे परिणाम प्राप्त होते हैं।

पूर्व दौर अवस्था में मिर्गी के वास्तविक दौरे से कुछ घंटे अथवा कुछ दिन पूर्व रोगी में दौरे के पूर्व लक्षण दिखाई दे सकते हैं। रोगी को कुछ चेतावनी, जानकारी अथवा दौरे का कुछ-कुछ आभास मिल जाता है। यह मूड़ में उतार-चढ़ाव, बेचैनी, उदासी, धड़कन, पसीना, अपच, कब्जीयत, चिड़चिड़ापन, सिरदर्द, अनिद्रा, मांसपेशियों का फड़कना या झनझनाहट के रूप में हो सकता है। ये लक्षण सभी प्रकार की मिर्गी तथा एक प्रकार की मिर्गी में हर समय नहीं देखे जा सकते परंतु बहुत से पुराने रोगी अपने अनुभव से इन्हें पहचानने लगते हैं तथा दौरा आने का सही पूर्वानुमान लगा लेते हैं। ऐसा लाभप्रद होता है क्योंकि इसके आधार पर कुछ रोगी आराम करके अथवा अपनी दिनचर्या बदल कर अथवा दवा की अतिरिक्त खुराक लेकर दौरे से बचने का उपाय खोज लेते हैं। वे स्वयं की सुरक्षा कर पाना भी सीख लेते हैं। पूर्वानुमान के इन लक्षणों के पैदा होने की कार्यविधि अज्ञात है। शायद दौरा आने के पूर्व मस्तिष्क में बिजली की अनियमित गतिविधि तथा रसायनों का असंतुलन धीरे-धीरे बढ़ने लगता होगा। पूर्वानुमानिक लक्षण अक्सर एक जैसे होते हैं और एक रोगी में बार-बार दोहराए जाते हैं। इसलिए इनके आधार पर रोगी मिर्गी के दौरे आने का पूर्वानुमान लगा सकता है।

दौर अवस्था में स्वयं दौरा आता है जो प्रेरक, संवेदी, मनोवैज्ञानिक व होशोहवास संबंधी गड़बड़ियां पैदा करता है। दौरा अवस्था के प्रारंभिक कुछ क्षण ऑरा या पूर्वाभास के रूप में जाने जाते हैं। वस्तुतः यह दौरे का ही भाग है जिसे मरीज बाद में होश आने पर भी याद रख पाता है। पूर्वानुमानिक लक्षणों का कोई स्थानिक महत्व नहीं होता बल्कि ये मस्तिष्क में दौरे से पहले होने वाले जैवरासायनिक परिवर्तनों के द्योतक होते हैं। ऑरा के साथ प्रेरक, संवेदी, स्वायत्त अथवा मनोविज्ञानी घटनाएं जुड़ी होती हैं। ऑरा से यह अनुमान लगाने में मदद मिलती है कि दौरे की शुरुआत मस्तिष्क के किस भाग में हुई। अतः इसका स्थानिक

महत्व होता है। परंतु इससे दौरे में शामिल विकृत विज्ञानी विक्षतियों का पता नहीं चलता है।

पश्च दौर अवस्था शरीर का ऐंठना समाप्त होने के साथ ही प्रारंभ होती है और उस समय तक रहती है जब तक रोगी पूरी तरह सामान्य नहीं हो जाता है। इस अवस्था को दौरे की नकारात्मक अवस्था भी कहते हैं। पश्च दौर अवस्था की अवधि कुछ मिनट से लेकर कुछ घंटों तक हो सकती है। कभी-कभी इस अवस्था की अवधि काफी लंबी लगने लगती है क्योंकि यह औषधि के प्रभाव से आने वाली नींद अथवा दौरे के पश्चात् आने वाली नींद के साथ जुड़ जाती है। पश्च दौर अवस्था की अवधि अनेक बातों पर निर्भर करती है जिनमें से कुछ ज्ञात हैं तथा कुछ अज्ञात हैं। ज्ञात कारकों में प्रमुख हैं—मिर्गी का प्रकार, दौरे की तीव्रता, दौरों को आवृत्ति, मरीज की उम्र तथा मस्तिष्क में विकृति का स्वरूप। यह अवस्था यदि कम अवधि तथा कम तीव्रता की हो तो मरीज के रिश्तेदार अन्य दर्शक उसे पहचान भी नहीं पाते। ई.ई.जी. जांच में इस समय धीमी गति की तरंगों की बहुलता से इसे पहचानने में मदद मिलती है। पश्च दौर अवस्था के लक्षण हैं—उल्टी, भ्रम, बेमतलब हिलना-डुलना, सिरदर्द, बदनदर्द, अधिक नींद आना, कमजोरी, शून्य में ताकना तथा कुछ समय के लिए अपंगता। आंशिक या फोकल मिर्गी में पश्च दौर की कमजोरी पूरे शरीर में न होते हुए सिर्फ उन हाथ-पैरों में पाई जाती है जिनमें दौरा आया था। कुछ घंटों से लेकर कुछ दिनों तक की अवधि के लिए यह लकवेनुमा कमजोरी रहती है तथा बाद में ठीक हो जाती है। पश्च दौर अवस्था के कुछ लक्षणों का निश्चित महत्व होता है। ये लक्षण हैं—भ्रम, हकलाना अथवा खोजी गतिविधि, शून्य में ताकना तथा कुछ समय के लिए अपंगता। रोगी में पश्च दौरे के लक्षणों की उपस्थिति मिर्गी को पहचानने तथा मिर्गी के वास्तविक दौरों व अन्य प्रकार के दौरों के बीच भेद करने में सहायक होती है। ऑरा से दौरे के उत्पत्ति स्थल को पहचानने में मदद मिलती है। ऐसा माना जाता है कि पश्च दौर के लक्षण तंत्रिका कोशिकाओं के थक जाने के कारण होते हैं। सभी प्रकार के दौरों में ये तीनों अवस्थाएं देखने को नहीं मिलती हैं। इन अवस्थाओं का पाया जाना अज्ञात कारणों के अतिरिक्त मस्तिष्क की परिपक्वता तथा निरोधक एवं उत्तेजक प्रणालियों के बीच संतुलन पर निर्भर करता है। नवजात शिशुओं में दौरे टुकड़ों में आते हैं। इसलिए वे शृंखलाबद्ध रूप में आते हैं जैसे कि बच्चों और वयस्कों में।

अब मैं कुछ सामान्य प्रकार की मिर्गी और उसके प्रमुख लक्षणों के बारे

में संक्षेप में बताऊंगा। इसका विशेष महत्व है। यह जानकारी मरीजों तथा उनके रिश्तेदारों के लिए है ताकि वे एक रोगी में साथ-साथ पाए जाने वाले एक से अधिक प्रकार के मिर्गी के दौरों की पहचान कर सकें। रोगी की आयु बढ़ने के साथ मिर्गी के रूप बदल सकते हैं। यह जानना सामयिक भी है और बहुत महत्वपूर्ण भी कि अलग-अलग प्रकार की मिर्गी में एक औषधि का प्रभाव एक जैसा नहीं होता है।

ग्रांडमाल (सर्वव्यापी अकड़न व झटके)

यद्यपि इस प्रकार की मिर्गी अधिक नहीं पायी जाती है, लेकिन सबसे अधिक इसे ही जाना जाता है। सड़कों के किनारे, बाजारों व सार्वजनिक स्थानों पर प्रायः सही मिर्गी देखने को मिलती है। इसके लक्षण विशिष्ट व नाटकीय होते हैं तथा देखने वालों पर गहरा प्रभाव छोड़ते हैं। मिर्गी शब्द से आम लोगों के मन में जो रूप उभरता है वह इसी किस्म के लिए लागू होता है। मिर्गी के दौरे की जिन तीन अवस्थाओं की चर्चा की गयी है, उनके उदाहरण इस किस्म की मिर्गी में अच्छी तरह से देखने को मिलते हैं। हालांकि हो सकता है कि सभी रोगियों में तीनों अवस्थाएं देखने को न मिलें। व्यक्ति खड़े-खड़े या चलते हुए अचानक जमीन पर गिर पड़ता है। आरंभिक दौर में कुछ सैकेंड के लिए पूरे शरीर में अकड़न या तनाव होता है। इसी दौरान तेज चीख, शरीर का नीलापन, पेशाब निकल जाना, जीभ कट जाना व अन्य चोटें लग सकती हैं। अगला दौर कुछ मिनटों के लिए शरीर में झटके आने का होता है। शरीर की रंगत लौट आती है, पुतलियां फैल जाती हैं, नाड़ी तेज हो जाती है व खूब पसीना आता है। इन दोनों अवस्थाओं में मरीज बेहोश रहता है। तत्काल होश नहीं आता है। अनेक मिनटों के लिए मरीज सुस्त, उनींदा व भ्रमित रहता है। तत्पश्चात् गहरी नींद आ सकती है। कुछ मरीज तो दौरे से वापस आ जाते हैं परंतु कुछ को जागने पर सिरदर्द, बदनदर्द व कमजोरी महसूस होती है, लेकिन मन व बुद्धि सामान्य होती है। ये दौरे किसी भी उम्र में आ सकते हैं, तथा इनका कारण ज्ञात या अज्ञात हो सकता है। अधिकांश अज्ञात-कारण दौरे किशोरावस्था में शुरू होते हैं। इस प्रकार की मिर्गी यदि प्रौढ़ावस्था में हो और उनमें यदि 'पश्च दौर' का लकवा भी देखा जाये तो ऐसे मरीजों की जांच की जानी चाहिए कि उनके मस्तिष्क में कहीं ट्यूमर या रसौली या कोई गांठ तो नहीं है। मस्तिष्क-विद्युत-अभिलेख (ई.ई.जी.) में पूरे मस्तिष्क से एकदम सम-क्रमिक रूप से उठने वाले विद्युतीय विस्फोट (शूक व तरंग) दिखाई दे सकते

हैं। इस प्रकार की मिर्गी में औषधियों से अच्छा लाभ मिलता है। इसमें आमतौर पर दौरों की संख्या कम होती है।

पतीतमाल (एबसेंस अथवा लघु दौरे)

पतीतमाल दौरे पांच वर्ष की उम्र से लेकर 15 से 20 वर्ष की उम्र तक देखे जाते हैं। इस प्रकार की मिर्गी के रोगियों की संख्या कम होती है। एक बालक को एक दिन में सैकड़ों दौरे आ सकते हैं। दौरे का समय सिर्फ 5 से 10 सैकेंड तक होता है। बच्चा अचानक स्थिर हो जाता है। वह गतिशून्य हो आसपास से कट जाता है व भावहीन आंखें शून्य में ताकती हैं। बच्चा गिरता नहीं है, लेकिन आंखें झपक सकती हैं। हाथ-पैरों में हरकत नहीं होती, लेकिन वस्तु छूट सकती है। तुरंत होश आ जाता है। एक क्षण के लिए बालक इधर-उधर देखता है तथा पुनः पहले से जारी गतिविधि में लीन हो जाता है, मानो कुछ हुआ ही न हो। बहुत समय तक परिवार वालों को इसका पता ही नहीं चलता है। सोचते हैं बच्चे का ध्यान कहीं और चला जाता है अथवा उसका पढ़ने व काम करने में मन नहीं लगता है। लोग सोचते हैं कि बच्चा दिवास्वप्न देख रहा है। अध्यापकों के लिए महत्वपूर्ण है कि वे इस अवस्था को जानें। अनेक बार अध्यापक ही पहली बार बच्चे को चिकित्सक तक ले जाने की सलाह देते हैं। इन मरीजों की बुद्धि सामान्य होती है तथा तंत्रिका विज्ञानी विकार नहीं होता है। मस्तिष्क-विद्युत-अभिलेख में विशिष्ट खराबी देखी जाती है। अतिसंक्रमिक सर्वव्यापी विद्युतीय विस्फोट (शूक व तरंग) खासतौर से प्रति सैकेंड में तीन बार की आवृत्ति से पैदा होते हैं। एक-दो मिनट तक जोर-जोर से सांस दिलवा कर इस प्रकार का दौरा व ई.ई.जी. की विकृति पैदा की जा सकती है।

उपचार न होने की दशा में बच्चों की पढ़ाई पर बुरा असर पड़ता है और इसी से बच्चे को तंत्रिका विज्ञानी चिकित्सक के पास ले जाने की आवश्यकता महसूस होनी चाहिए। पहचान में न आने और उपचार न होने पर भी किशोरावस्था अथवा 20 वर्ष की आयु के पश्चात् पतीतमाल दौरे आना बंद हो जाते हैं, लेकिन अनेक मरीजों में बीमारी मिटती नहीं, स्वरूप बदल लेती है। ग्रांडमाल व अन्य प्रकार के दौरे आने लगते हैं। कुछ बच्चों में पतीतमाल व ग्रांडमाल दोनों प्रकार के दौरे आते रहते हैं और चिकित्सक को रोगी का इतिहास जानने अथवा उसकी ई. ई. जी. देखने के पश्चात उसमें पतीतमाल मिर्गी होने की जानकारी प्राप्त होती है। एक अन्य प्रकार के दौरे जिन्हें आंशिक जटिल कहते हैं पतीतमाल से

मिलते-जुलते प्रतीत होते हैं। दोनों में भेद करना जरूरी है। आंशिक जटिल दौरे के लक्षण होते हैं—होंठ चाटना, होंठ चलाना, चबाना अथवा हाथ-पैर चलाना आदि। आंशिक जटिल दौरे न केवल बच्चों में बल्कि बाद की उम्र में भी देखे जाते हैं तथा उनमें ई.ई.जी. विकृति अलग प्रकार की होती है। कुछ विशिष्ट औषधियों से इस प्रकार की मिर्गी का प्रभावशाली उपचार किया जा सकता है।

विकारस्थानी (फोकल) या आंशिक (पार्शियल) दौरे

यह पहले ही बताया जा चुका है कि मस्तिष्क की ऊपरी भूरी परत (कार्टेक्स या प्रांतस्था) में से कहीं भी फोकल मिर्गी उत्पन्न हो सकती है। प्रमुख स्थान हैं कनपटी के भाग, तत्पश्चात् पश्च भाग, अग्रभाग, अनुकपाल तथा अधोप्रांतस्था के कुछ भाग। सभी फोकल मिर्गी में कोई-न-कोई रचनात्मक विकृति जरूर पाई जाती है, यद्यपि उसे सदैव पहचाना या दर्शाया नहीं जा सकता। यह रचनात्मक विकृति अनेक प्रकार की होती है, जो आमतौर पर बीमारी की शुरुआत के समय मरीज की उम्र पर निर्भर करती है।

आंशिक प्रेरक दौरे की शुरुआत चेहरे, हाथ या पांव में बार-बार फड़कन या झटकों के साथ होती है। यह फड़कन शुरू में सीमित स्थान में होती है और कुछ क्षणों में यह शरीर के पूरे एक आधे भाग में फैल जाती है। यदि तनाव व झटके शरीर के दूसरे भाग को भी समाहित कर लें, तो मरीज बेहोश हो जाता है और तब इस घटना को आंशिक दौरे का द्वितीयक सर्वव्यापीकरण कहते हैं। यदि आंशिक दौरा शरीर के आधे भाग (दाएं या बाएं) तक ही सीमित रहे तो रोगी होश में रहता है। मस्तिष्क के विकार स्थान (या फोकस) से उठने वाला यह विद्युतीय विस्फोट एक निश्चित क्रम में शरीर के आधे भाग को प्रभावित करता चला जाता है। इसलिए इसे जैक्सोनियन दौरा कहते हैं, जो अपेक्षाकृत कम देखने में आता है। ई.ई.जी. (मस्तिष्क-विद्युत-अभिलेख) में दौरों की विपरीत दिशा वाले गोलार्धों में शूक व तरंगों वाली खराबी देखने को मिलती है। फोकल या आंशिक मिर्गी के झटके बार-बार आते हैं और कभी-कभी लंबे समय तक जारी रह सकते हैं अर्थात अनेक दिनों तक। नींद में भी बंद नहीं होते व आमतौर पर इन पर दवाइयों का असर नहीं होता। इस प्रकार के दौरों को 'सतत आंशिक मिर्गी' कहते हैं।

आंशिक जटिल दौरे (कनपटी के हिस्से की मिर्गी)

इन दौरों का उद्‌गम कनपटी के हिस्से या मस्तिष्क के अग्रभाग या अन्य भाग के किसी फोकस या विकार स्थान से होता है, लेकिन अन्य आंशिक दौरे के समान इनमें होशोहवास में गड़बड़ी तो होती है, परंतु रोगी पूरी तरह बेहोश नहीं होता है। इन्हें कांपलेक्स या जटिल दौरे कहा जाता है। मरीज आसपास की दुनिया से कट जाता है, खो जाता है व भ्रमित हो जाता है। अन्य आंशिक या फोकल दौरों के समान इनमें भी मोटर (प्रेरक), सेंसरी (संवेदी), मनोवैज्ञानिक व आटोनामिक लक्षण देखे जा सकते हैं। यकायक कुछ क्षणों के लिए जानी या अनजानी गंध या स्वाद का अहसास होता है, ध्वनियां सुनाई पड़ती हैं, दृश्य दिखाई देते हैं, चक्कर आते हैं, विचारों व भावनाओं में परिवर्तन होता है। आटोमेटिज्म (स्वप्रेरित बेजा हरकतें) होते हैं। होंठ चलाना, जीभ हिलाना, चाटना, गुटकना या निगलना, कपड़ों को उठाना, चल पड़ना आदि आटोमेटिज्म के उदाहरण हैं। इनकी अवधि आधे से एक मिनट की होती है। दुर्भाग्यवश अनेक बार देखने वाले व नीम हकीम इन दौरों का गलत अर्थ लगा लेते हैं। कभी-कभी पूर्वाभास हो सकता है। अनेक मामलों में कोई हरकतें नहीं होतीं तथा व्यक्ति पतीतमाल दौरे जैसी एबसेंस अवस्था (अनुपस्थिति) में चला जाता है। कुछ विशेष प्रकार के दौरों में मरीज दौड़ता है, हंसता है या लिखने लगता है। इन लक्षणों से अनुमान लगाया जा सकता है कि आंशिक जटिल मिर्गी के निदान में गलतियां होती होंगी। लोग इन मरीजों को पागल अथवा मानसिक रोगी समझ बैठते हैं।

ई.ई.जी. (मस्तिष्क-विद्युत-अभिलेख) में मस्तिष्क के कनपटी वाले अथवा अग्रभाग के दाएं या बाएं अथवा दोनों ही भागों पर खराबी देखने को मिलती है जो एक फोकस या विकार स्थान से शुरू होकर पूरे मस्तिष्क पर सर्वव्यापी हो सकती है। आंशिक जटिल दौरे किसी भी उम्र में हो सकते हैं। उनके पीछे सदैव निहित रहने वाली विकृति को पहचानना या दर्शाना हमेशा संभव नहीं होता। इस प्रकार की मिर्गी में दौरों की संख्या ग्रांडमाल मिर्गी की अपेक्षा अधिक होती है। अन्य प्रकार की मिर्गी की अपेक्षा इसका अधिक प्रभावशाली नियंत्रण नहीं हो पाता है। इसमें औषधियां अधिक प्रभावशाली नहीं होती हैं।

मायोक्लोनिक दौरे (मांसपेशियों के झटके)

मांसपेशियों के एक समूह या भुजा के किसी भाग अथवा पूरी भुजाओं या पूरे शरीर में अचानक जोर से झटके आने को मायोक्लोनस कहते हैं। इसके प्रभाव

से सिर भी हिलने लगता है तथा धड़ आगे और पीछे की ओर झुक सकता है। हाथ से चीजें छूटकर गिर सकती हैं। महीनों और वर्षों तक बच्चों के हाथ से बार-बार गिरकर प्याले, शीशे, कलम इत्यादि टूट सकते हैं। उन्हें ब्रश करने में कठिनाई होती है। ऐसे बच्चों के बारे में सोच लिया जाता है कि वे असावधान, चंचल हैं व हाथ मानो काठ के बने हों। इन आचरणगत विकारों के बारे में तब तक पता नहीं चलता है जब तक बड़ा दौरा न पड़े। बड़ा दौरा (ग्रांडमाल) आने पर बीमारी का सही स्वरूप समझ में आता है। यद्यपि इन दौरों में व्यक्ति गिर सकता है, लेकिन बेहोश नहीं होता तथा तत्काल उठ खड़ा होता है। मायोक्लोनिक झटके बड़े ग्रांडमाल के पहले या अन्य प्रकार की मिर्गी के साथ आ सकते हैं।

मायोक्लोनिक दौरे अनेक प्रकार की मस्तिष्क शोथों तथा तंत्रिका-जन्य रोगों के कारण आ सकते हैं। नींद के दौरान स्वस्थ व्यक्तियों में आने वाले मायोक्लोनिक झटके मिर्गी से अलग प्रकार के होते हैं। मिर्गी से इनका कोई संबंध नहीं होता है। मायोक्लोनिक झटके दिन या रात कभी भी आ सकते हैं, परंतु प्रायः नींद से जागने के तुरंत बाद की अवधि में अधिक आते हैं। बच्चों में मायोक्लोनिक झटके अन्य प्रकार की मिर्गी के साथ-साथ आते हैं और अक्सर इनसे ग्रस्त बच्चा मानसिक मंदता का शिकार होता है। परंतु किशोरों व वयस्कों की मायोक्लोनिक मिर्गी का औषधियों द्वारा सफलतापूर्वक उपचार हो जाता है हालांकि दवाई रोकने पर झटके पुनः शुरू हो सकते हैं। मायोक्लोनिक मिर्गी में ई.ई.जी. जांच में विशिष्ट खराबियां देखने को मिलती हैं।

ज्वर-जन्य दौरे

इन दौरों का मुख्य कारक बुखार है, जो झटके आने के पहले ही शुरू हो चुकता है। गुदा के हिस्से का तापमान लगभग 38^0 से. होता है। कपाल के भीतर किसी प्रकार का संक्रमण नहीं होना चाहिए। बुखार मस्तिष्क के बाहर किसी अंग जैसे ऊपरी श्वास मार्ग या फेफड़ों में संक्रमण के कारण हो सकता है। संक्रमण जीवाणुओं अथवा विषाणुओं में से किसी से भी हो सकता है। और इनके कारण हलका, गैर-विशिष्ट संक्रमण जैसे ग्रसनी शोथ, टांसिल शोथ अथवा ऊपरी श्वसन मार्ग के संक्रमण से लेकर गंभीर और विशिष्ट प्रकार का संक्रमण हो सकता है। रोगाणु सीधे मस्तिष्क में प्रवेश कर मस्तिष्क ज्वर द्वारा झटके पैदा कर सकते हैं, लेकिन तब उन्हें ज्वर-जन्य दौरे नहीं कहा जाता। कुछ बच्चों में दौरा समाप्त हो चुकने के पश्चात् बुखार बढ़ता है। इन्हें भी ज्वर-जन्य दौरा नहीं कहा जाता है। बहुत

बार ज्वर का कारण पता करना संभव नहीं होता है।

ज्वर-जन्य दौरे 6 माह की आयु से पूर्व और लगभग 7-8 वर्ष की आयु के बाद बहुत कम आते हैं। सबसे अधिक दौरे 9 से 18 माह की उम्र के बीच आते हैं। यदि किसी बच्चे में 5 वर्ष की आयु तक ज्वर-जन्य दौरे नहीं आए हों तो उसके पश्चात् ज्वर-जन्य दौरा पड़ने की आशंका लगभग समाप्त हो जाती है। प्रतिवर्ष प्रति हजार बच्चों में से लगभग 5 बच्चों को ज्वर-जन्य दौरे आते हैं। इस प्रकार के दौरों से ग्रस्त 30 से 50 प्रतिशत बच्चों में आनुवंशिक कारण जिम्मेदार होते हैं। इन बच्चों में आनुवंशिक तौर पर दौरे आने की संभावना कम होती है। मस्तिष्क की अपरिपक्वता के कारण यह संभावना और कम हो जाती है। ज्वर-जन्य दौरे क्षणिक होते हैं लेकिन कभी-कभी अधिक देर तक चल सकते हैं। इनमें बेहोशी आती है व पूरे शरीर में अकड़न के साथ झटके आते हैं, परंतु ये फोकल और एक पार्श्वीय भी हो सकते हैं। आमतौर पर तापमान उच्च सीमा पर पहुंचने पर एक दौरा आता है। प्रभावित लड़के-लड़कियों का अनुपात 3 : 2 का होता है। ई.ई.जी. जांच यदि एक सप्ताह बाद की जाये तो वह सामान्य होती है। ई.ई.जी. में खराबी को बहुत लोग ज्वर-जन्य दौरे का सूचक नहीं मानते हैं। ज्वर-जन्य दौरों से ग्रस्त बच्चों में से कम से कम 10 प्रतिशत में वयस्क होने पर अन्य प्रकार की मिर्गी हो सकती है।

प्रतिवर्त मिर्गी (रिफ्लेक्स मिर्गी)

कुछ मिर्गी के दौरे विशिष्ट परिस्थितियों में आ सकते हैं। इनके मूल में कोई खास संवेदी उद्दीपन होता है। यह संवेदी उद्दीपन विभिन्न प्रकार का हो सकता है। उदाहरण के लिए प्रकाश, संगीत, पढ़ना, सिर पर गर्म पानी डालना, टेलीविजन देखना आदि। इन मरीजों के अधिकांश दौरे उक्त विशेष परिस्थिति में अधिकता से आते हैं। दौरे किसी भी स्वरूप के हो सकते हैं अर्थात् सर्वव्यापी या फोकल। प्रकाश संवेदी मिर्गी कुछ जानवरों में भी देखी जाती है। रुक-रुक कर पड़ने वाला तेज प्रकाश, दौरे का तात्कालिक कारण होता है। प्रयोगशाला में एक तेज बल्ब को बार-बार जला-बुझा कर मरीज में उद्दीप्न किया जाता है तथा यह जानने की कोशिश की जाती है कि मरीज को प्रकाश संवेदी मिर्गी तो नहीं है। एक विशेष प्रकार की अवस्था में कुछ मरीज स्वयं प्रकाश संवेदी मिर्गी को बढ़ावा देते हैं। वे आंखों के आगे बार-बार हाथ को हिलाते हैं जिससे प्रकाश की मात्रा कम-ज्यादा होती है। प्रतिवर्त मिर्गी को बढ़ावा देने वाले कारण से बचना इसको नियंत्रित

करने का एक महत्वपूर्ण उपाय है।

मनोवस्था जनित दौरे (हिस्टीरिया)

मनोवैज्ञानिक अथवा हिस्टीरिया के दौरे युवा व वयस्क स्त्रियों व पुरुषों में अधिक देखे जाते हैं। यह वास्तविक मिर्गी नहीं होती। मिर्गी से मिलते-जुलते लक्षण अभिनीत किए जाते हैं। अभिनय जान-बूझकर या होशोहवास में नहीं होता बल्कि अनजाने में अवचेतन मन से होता है। इसके मूल में कोई तनावकारी परिस्थिति होती है तथा मरीज उससे बचना चाहता है या अपने प्रति ध्यान आकर्षित करवाना चाहता है। हिस्टीरिया के दौरे आमतौर पर किसी परिस्थिति से संबद्ध होते हैं। इन दौरों का प्रदर्शन हमेशा कुछ व्यक्तियों की उपस्थिति में होता है। लक्षण एक से नहीं होते, बदलते रहते हैं। असली मिर्गी की तुलना में इन दौरों की अवधि लंबी होती है। हाथ-पांव में अकड़न व झटके मिर्गी जैसे नहीं होते बल्कि उन्हें बेमतलब हिलाया-डुलाया व फेंका जाता है। कराहने की आवाजें निकलती हैं तथा बेहोशी के बावजूद मरीज का आसपास के वातावरण से संपर्क बना रहता है। वे बाद में स्वीकार करते हैं कि उन्हें कुछ आवाजें सुनाई पड़ रही थीं, परंतु वे बोल नहीं पा रहे थे। मिर्गी में पाए जाने वाले पश्चद्दौर के लक्षण हिस्टीरिया में नहीं मिलते। दौरे के समय ई.ई.जी. जांच में कोई खराबी नहीं पाई जाती है।

सतत (स्टेटस) मिर्गी

जब मिर्गी के दौरे एक के बाद एक लगातार आते चले जाएं तथा दो दौरों के मध्य बेहोशी बनी रहे तो इसे 'सतत मिर्गी अवस्था' कहते हैं। इसे उस प्रकार के दौरों से अलग मानना चाहिए जब बार-बार दौरे आते हैं परंतु उन दौरों के बीच थोड़ी देर के लिए ही सही रोगी को होश आ जाता है। सतत मिर्गी एक गंभीर अवस्था है तथा उसका आपातकालीन अवस्था में शीघ्रतापूर्वक, पर्याप्त उपचार करना चाहिए। मिर्गी के विभिन्न प्रकार के दौरे, जिनका वर्णन ऊपर किया गया है, अपनी अलग-अलग प्रकार की सतत अवस्था (स्टेटस) पैदा कर सकते हैं। आम तौर पर ये तीन प्रकार के होते है—(1) हाथ-पांव में अकड़न व झटके वाले (कन्वलशन युक्त); (2) बिना कन्वलशन वाले; तथा (3) दाईं या बाईं किसी एक पार्श्व में सीमित स्थानीय दौरा।

सतत मिर्गी अज्ञात कारण से हो सकती है अथवा मस्तिष्क में मौजूद किसी विक्षप्ति के कारण लक्षण-युक्त हो सकती है। सतत मिर्गी अवस्था का सबसे आम

कारण है—मरीज द्वारा औषधियों का सेवन बंद कर देना। अच्छे-भले मरीज जिनके दौरे, औषधियों के नियमित सेवन के कारण रुके हुए थे, प्रायः ऐसी भूल कर बैठते हैं और परिणाम होता है मिर्गी का यह खतरनाक, गंभीर सतत रूप। अन्य कारण हैं—बीच-बीच में हो उठने वाले ज्वर, किन्हीं अन्य कारणों से ली गयी औषधियों द्वारा मिर्गी-रोधी औषधि के प्रभाव में व्यवधान, अनुपयुक्त या अल्प मात्रा में औषधि का सेवन। कुछ प्रौढ़ मरीजों में (मस्तिष्क में रसौली या गांठ) के कारण सतत मिर्गी अवस्था पहली बार में ही पैदा हो सकती है। सतत मिर्गी अवस्था के गंभीर दुष्परिणाम हो सकते हैं और उपचार न मिलने की दशा में रोगियों में मृत्यु दर अधिक हो सकती है।

मिर्गी के दौरों को उत्पन्न करने वाले कारण

मिर्गी के प्रति संवेदनशील व्यक्तियों तथा औषधियों द्वारा नियंत्रित मरीजों में, अनेक तनावपूर्ण कारक, कभी-कभी दौरा आने का तात्कालिक कारण बन जाते हैं। इन कारकों को मिर्गी का मूल कारण नहीं समझना चाहिए। ये कारण हैं—नींद की कमी या जागरण, नींद से जागने के बाद की तत्काल अवस्था, भूखे रहना या उपवास, शारीरिक या मानसिक थकान, भावात्मक उथल-पुथल, बुखार, चोट, दुर्घटना, शल्य-क्रिया आदि। कुछ व्यक्ति जिनमें मिर्गी की प्रवृत्ति होती है, परंतु एक भी दौरा नहीं आया होता, उनमें ऐसे किसी तात्कालिक कारण से यदि एक दौरा आ जाए और फिर वर्षों तक दूसरा न आए, तो उन्हें मिर्गी का रोगी नहीं माना जाना चाहिए। इन कारकों से प्रेरित दौरे को तनाव दौरा भी कहा जाता है। मिर्गी के संपूर्ण उपचार में इस प्रकार के दौरों की अनदेखी कर दी जाती है। मिर्गी के सफल उपचार के लिए आवश्यक है कि इन तनावकारी परिस्थितियों से जहां तक संभव हो बचा जाये।

निदान

प्रत्येक मामले में यह तय करना सबसे पहले जरूरी है कि व्यक्ति मिर्गी से ग्रस्त है अथवा नहीं और इस प्रकार मिर्गी की सटीक पहचान जरूरी है। आमतौर पर दौरों को पहचानने के लिए एक अच्छी नैदानिक मार्गदर्शिका उपलब्ध है जिसके अनुसार मिर्गी के दौरे–(1) अचानक, (2) क्षणिक, (3) बारंबार, व (4) एक रूपी होते हैं। मरीज व रिश्तेदारों से घटना का वर्णन सुनते समय पूर्व दौर, दौर तथा पश्च दौर, तीनों अवस्थाओं का हाल सुनना जरूरी है। पश्च दौर के लक्षण निदान में बहुत उपयोगी होते हैं। अधिकांश मामलों में मिर्गी का निदान दौरे व अन्य अवस्थाओं के वर्णन (हिस्ट्री) या इतिवृत्त से होता है तथा ऐसा होना भी चाहिए। मरीज के रिश्तेदार व अन्य साक्षियों के लिए यह महत्वपूर्ण है कि वे घटना का वर्णन सिलसिलेवार व विस्तार से तो करें, लेकिन बढ़ा-चढ़ाकर नहीं। यह कहना अनावश्यक है कि जांचकर्ता को रोग वृत्तांत तथा नैदानिक जांच से बचना नहीं चाहिए, चाहे वह जितनी भी अधिक परिष्कृत क्यों न हो। आधुनिक व उच्च तकनीक से परिपूर्ण जांच जैसे एक्सरे या ई.ई.जी. द्वारा वह निदान नहीं हो सकता जो मात्र रोग वृतांत से हो जाता है। एक अनुमान के अनुसार विशिष्ट मिर्गी क्लीनिक या विभाग को भेजे जाने वाले मरीजों में से लगभग 15-20 प्रतिशत को मिर्गी नहीं होती है। एक चिकित्सक के लिए यह सुख और संतोषजनक होता है कि वह ऐसे सही मरीजों की पहचान कर ले और उन्हें अनावश्यक लंबे इलाज से बचा ले व मिर्गी का लांछन न लगने दे। इसके विपरीत मिर्गी रोग न होने पर भी किसी रोगी को मिर्गी से ग्रस्त घोषित कर देना किसी भी डाक्टर के लिए अत्यंत दुखकारी होगा। इससे बेहतर तो यह भूल होगी कि मिर्गी के रोगी को मिर्गी रोगी करार देने में थोड़ी देर हो जाये। बिना निश्चित प्रमाण के मिर्गी के

रोगी को प्रारंभ में मिर्गी का रोगी करार न देने में चिकित्सक को शर्म नहीं आनी चाहिए क्योंकि दूसरा या तीसरा दौरा होते न होते, बीमारी का वास्तविक स्वरूप प्रकट हो ही जायेगा। उपचार तब थोड़ी देर से ही आरंभ हुआ तो कोई हानि नहीं होगी।

सदमा, गश खाना, शिशुओं में रोने के समय लंबी सांस रोक लेना, केटाफ्लेक्सी (हाथ-पांव की क्षणिक शिथिलता), मनोजनित दौरे और दिल की धड़कन की अनियमितताएं आदि को मिर्गी नहीं मान लेना चाहिए। नवजात शिशुओं में मिर्गी के निदान में प्रायः चूक हो जाती है क्योंकि दौरों की तीव्रता अत्यंत मंद होती है। लक्षण अलग प्रकार के होते हैं जैसे कि पलक झपकाना, पुतलियां स्थिर हो जाना, सांस रुक जाना या तेज चलना, हाथ-पैरों को बेतरतीबी से हिलाना। नवजात शिशु अनेक बार अचानक ध्वनि, प्रकाश या स्पर्श से चौंक उठते हैं। मिर्गी में पैदा होने वाले मायोक्लोनिक झटके ऐसे ही दिखाई पड़ते हैं व दोनों में अंतर करना मुश्किल होता है। नवजात शिशुओं में दौरों की अभिव्यक्ति, पलक झपकाने, हाथ-पांव की बेतरतीब हरकतों या कुछ क्षणों के लिए सांस रुकने के रूप में हो सकती है। चौंकना या चमक उठना कभी-कभी मायोक्लोनिक झटकों के समान प्रतीत होता है। दो से चार वर्ष की उम्र के बच्चे कभी-कभी जिद्दी स्वभाव में सांस रोक लेते हैं जिससे शरीर का रंग फीका पड़ जाता है, पसीना आता है और चक्कर आ जाता है। सदमे वाली मूर्छा लेटी हुई या बैठी हुई अवस्था में नहीं आती। अचानक गहरी चोट, दर्द या भयावह दृश्य से मूर्छा आ सकती है। इसका आरंभ मिर्गी के दौरों के समान एकदम अचानक नहीं होता है। नाड़ी की गति कम हो जाती है, शरीर पीला पड़ जाता है, पसीना छूटता है। आमतौर पर चोट नहीं लगती है। होश जल्दी आ जाता है और पश्च दौर की भ्रम अवस्था नहीं होती है। किशोरों तथा वयस्कों में हिस्टीरिया से नैदानिक भेद करना सबसे कठिन होता है। हिस्टीरिया अर्थात् मनोजनित दौरे अपना रूप बदलते रहते हैं और हाथ-पांव के झटके समक्रमिक होने की बजाय बेतरतीब होते हैं। इन दौरों का प्रदर्शन शुरू में किसी लाभ के लिए किया जाता है। बारीकी से प्रश्न पूछने पर ज्ञात होता है कि तथाकथित बेहोशी के दौरान भी मरीज वातावरण से पूरी तरह कटा हुआ नहीं था। केटाप्लेक्सी और अधसीसी (आधे सिर का दर्द) भी कभी-कभी मिलती-जुलती अवस्था पैदा करते हैं। बड़ी उम्र में आरंभ होने वाले मिर्गी के दौरे मस्तिष्क में ट्यूमर, लकवा, प्रमस्तिष्कग्रही रोगों या क्षयकारी बीमारियों से हो सकते हैं। मिर्गी के दौरे की किस्म से उसकी

हेतुकी का अनुमान लगाने में मदद नहीं मिलती। प्रौढ़ावस्था के बाद की उम्र में बेहोशी के साथ यकायक गिर जाना पड़ना एक कठिन नैदानिक समस्या होती है। मिर्गी के अतिरिक्त कुछ अन्य अवस्थाएं भी इसका कारण होती हैं जैसे कि दिल की अनियमित गति का अत्यंत धीमा हो जाना।

मिर्गी है, यह सुनिश्चित कर लेने के बाद दूसरा प्रश्न उठता है मिर्गी किस प्रकार की है। मरीज व रिश्तेदार वर्णन के द्वारा इसमें सहायता कर सकते हैं। चिकित्सकों को चाहिए कि वे रोगी के माता-पिता से शुरू में पूछें क्या आपके बच्चे को आने वाले सभी दौरे एक ही प्रकार के हैं या अलग-अलग प्रकार के ? और यदि अलग-अलग हैं तो कितने प्रकार के हैं ? पिछले अध्याय में कुछ महत्वपूर्ण रूपों का वर्णन किया गया है और रोगियों से आशा की जाती है कि वे उनमें से कुछ की पहचान कर पायेंगे। यह पहचान जरूरी है क्योंकि उपचार तथा उसकी सफलता की संभावनाएं अलग-अलग होती हैं। किसी एक प्रकार की मिर्गी का उपचार करने के दौरान यह असामान्य नहीं कि बाद में मालूम पड़े कि उस रोगी को और भी प्रकार के दौरे आते हैं। पर्याप्त उपचार के बावजूद यदि किसी मरीज के दौरों पर नियंत्रण नहीं हो पा रहा हो तो यह भली-भांति परख लेना चाहिए कि कहीं उसे और प्रकार के दौरे भी तो नहीं आते। यह पता है कि कार्बामाजेपाइन नामक औषधि, द्वितीयक सर्वव्यापी दौरों को कभी-कभी मायोक्लोनिक या अगतिक रूप में बदल सकती है। एक आम गलती यह होती है बच्चों में लघु, अनुपस्थिति दौरों (एबसेंस) को जटिल आंशिक दौरों से अलग न पहचान पाना। इसके अतिरिक्त जटिल अनुपस्थिति दौरे तथा मायोक्लोनिकल दौरों को पहचानने में भी कठिनाई होती है।

प्रत्येक रोगी में तीसरे प्रश्न का उत्तर भी जरूरी होता है। यह प्रश्न है कि क्या दौरे किसी फोकस या विकार स्थान से पैदा हो रहे हैं अथवा यह सर्वव्यापी मिर्गी है। फोकल मिर्गी की पहचान, पूर्वाभास (ऑरा) या आरंभिक लक्षणों से की जा सकती है। फोकल लक्षणों में गर्दन व आंखों का एक दिशा में घूम जाना, होंठों के कोनों का फड़कना, हाथ व उंगलियों में झनझनाहट उठना, किसी एक दिशा में धुंधला दिखना या वाणी का अवरोध आदि शामिल हैं जो दौरे प्रारंभ होने से दिखाई दे सकते हैं। किसी एक दौरे में ये फोकल या स्थानीय लक्षण अनुपस्थित रह सकते हैं और उसी मरीज में अगले दौरे में प्रकट हो सकते हैं। कभी-कभी उपचार के दौरान दौरों की तीव्रता तथा स्वरूप में परिवर्तन आने से उनके फोकल लक्षण अधिक स्पष्ट नजर आ सकते हैं। सामान्यतः विकार स्थानी

फोकस का पुष्टिकरण करने में ई.ई.जी. से मदद मिलती है। फोकल या विकार स्थानी मिर्गी का उपचार कभी-कभी कठिन हो सकता है। उपचार के बावजूद अनियंत्रित मिर्गी में शल्य-चिकित्सा की योजना बनाते समय मिर्गी के फोकल या विकार स्थान का पता होना अत्यंत महत्वपूर्ण होता है।

चौथा प्रश्न जिसका उत्तर मिलना चाहिए वह है कि क्या मिर्गी अज्ञात कारण या प्राथमिक है अथवा लाक्षणिक या द्वितीयक है। एक आम नियम के अनुसार अधिकांश फोकल मिर्गी लाक्षणिक होती है हालांकि उसके पीछे निहित विकृति अलग-अलग प्रकार की हो सकती है। सभी प्रकार की लाक्षणिक मिर्गी का शल्यक उपचार नहीं होता है। सिर की चोट, संक्रमण, रक्त नलिकाओं की जन्म-जात विकृतियों, ट्यूमर या गांठ, अन्य रचनात्मक खराबियों, जन्मजात विकृतियों या क्षयकारी बीमारियों से लाक्षणिक मिर्गी में विक्षतियां उत्पन्न हो सकती हैं। इनका पता लगाने के लिए अनेक प्रकार की जांचों की जरूरत पड़ती है। अधिकांश सर्वव्यापी मिर्गी अज्ञात कारण या प्राथमिक होती है या कुछ ऐसी दुर्लभ बीमारियों की वजह से होती है जिनमें व्यापक तौर से तंत्रिका कोशिकाएं रोगग्रस्त होती हैं। इस वर्ग में यदि फोकल लक्षण मौजूद हों तो भी शल्यक उपचार की जरूरत नहीं होती है। अनेक बार उपलब्ध नैदानिक सुविधाओं से फोकल विक्षतियों की पहचान नहीं हो पाती है।

मिर्गी के प्रत्येक मामले में पांचवां प्रश्न है कि क्या मिर्गी के अतिरिक्त कोई अन्य तंत्रिका तंत्र संबंधी बीमारी या मस्तिष्क के अतिरिक्त अन्य अंगों की बीमारी साथ में मौजूद है या नहीं ? जो संबद्ध तंत्रिका विज्ञानी रोग महत्वपूर्ण हैं वे हैं—मंदबुद्धि, लकवा, कंपन व अन्य अनियमित गतिविधियां, देखने-सुनने के दोष, व्यवहारगत दोष जैसे कि आत्मलीनता आदि। अन्य अंगों की बीमारियों में यकृत, तिल्ली, गुर्दे, हड्डियां, जोड़ व अन्तःस्रावी ग्रंथियों की बीमारियां महत्वपूर्ण हैं। सर्वाधिक उपयुक्त उदाहरण है—हाइपोपेराथाइराइड नामक हारमोन की कमी से उत्पन्न रोग, लिपिडोसिस (कोशिकाओं में वसा की जमावट) आदि। इसलिए प्रत्येक रोगी की संपूर्ण सामान्य शारीरिक तथा विभिन्न अंगों की विस्तृत जांच जरूरी होती है। इन बीमारियों की पुष्टि करने के लिए कुछ विशेष परीक्षण किये जाते हैं।

मिर्गी के प्रत्येक मामले में छठा प्रश्न है कि मिर्गी के दौरों का मरीज के पठन-पाठन, सामाजिक व व्यवसाय वृत्ति पर क्या असर पड़ता है। सफल उपचार की योजना बनाने में इन बातों का दूरगामी महत्व होता है।

मिर्गी रोग का परिवार के अन्य सदस्यों में होना तथा आनुवंशिक प्रभावों का आकलन करना सातवां प्रश्न है जिसका उत्तर प्राप्त करना चाहिए। मार्गदर्शन व सलाह देने के लिए इन प्रश्नों के उत्तर बहुत महत्वपूर्ण हैं।

मस्तिष्क-विद्युत-अभिलेख (ई.ई.जी.)

हेन्स बर्गर ने 1929 में मनुष्यों में पहली बार मस्तिष्क की विद्युत गति का अभिलेख रिकार्ड किया। बाद के कुछ वर्षों में अमेरिका के ई.एल. गिब्स, एफ.ए. गिब्स, डब्ल्यू. जी. लेनाक्स तथा पी. डेविस तथा केनेडा के एच.एच. जेसपर और इंग्लैंड के डब्ल्यू. ग्रे. वाल्टर और डी. विलियम्स जैसे वैज्ञानिकों ने मिर्गी तथा मस्तिष्क ट्यूमर में ई.ई.जी. की उपयोगिता पर अपनी-अपनी खोजें प्रकाशित कीं। इसके बाद ई.ई.जी. का उपयोग सारी दुनिया में फैल गया और हर प्रकार की तंत्रिका तंत्र संबंधी बीमारी की जांच में उसका उपयोग किया जाने लगा। मरीजों में ई. ई.जी. का उपयोग भारत में पहली बार पांचवें दशक के उत्तरार्द्ध में किया गया। वर्तमान परिस्थितियों में ई.ई.जी. की सर्वाधिक उपयोगिता मिर्गी के उपचार में ही है। पिछले दो दशकों में नयी तकनीक (जैसे कि विद्युत विभवों का औसतीकरण) के विकास से ई.ई.जी. के उपयोग का दायरा व इसके उपयोग बढ़ गये हैं। बड़े पैमाने पर उपयोग के कारण यह जांच आसान व सस्ती हो गयी है। जीते जागते मस्तिष्क के विद्युतीय कामकाज को परखने का यह एक अनोखा झरोखा है। यह ध्यान देने की बात है कि सामान्य ई.ई.जी. के बावजूद किसी मरीज में मिर्गी की संभावना को पूरी तरह नकारा नहीं जा सकता तथा यह भी कि मात्र असामान्य ई.ई.जी. से किसी मरीज में मिर्गी के निदान की पुष्टि नहीं की जा सकती। ई. ई.जी. विकृति के महत्व का आकलन मरीज के लक्षणों व कलीनिकल जांच के समग्र विवेचन के बगैर नहीं किया जाना चाहिए। किसी एक मरीज में मिर्गी का निदान मात्र ई.ई.जी. पर निर्भर नहीं करता।

मस्तिष्क-विद्युत-अभिलेख या ई.ई.जी. सुरक्षित व हानिरहित जांच है जिसके द्वारा मस्तिष्क के कार्यों का बारंबार आकलन किया जा सकता है। ई.ई.जी. के

काम का सिद्धांत ई.सी.जी. (हृदय-विद्युत-अभिलेख) के समान ही होता है। ई.सी.जी. मशीन की तुलना में ई.ई.जी. मशीन में अधिक बड़े प्रवर्धन होते हैं।

मस्तिष्क से प्राप्त होने वाले विद्युत विभव अत्यंत सूक्ष्म परिमाण के होते हैं। अन्य स्रोतों से आने वाली अवांछित विद्युत गतिविधि को हटाने के लिए इलेक्ट्रानिक फिल्टरों का उपयोग किया जाता है। बहुत छोटे विद्युत विभवों को पकड़ने के लिए बड़े प्रवर्धकों का उपयोग किया जाता है। तंत्रिका कोशिकाएं विद्युत विभवों को जन्म देती हैं। इन्हीं में गड़बड़ी आने से मिर्गी होती है। स्वाभाविक है कि ई.ई.जी. मिर्गी की जांच का श्रेष्ठ उपाय है। सिर की त्वचा पर विद्युतोद (इलेक्ट्रोड) चिपका कर मस्तिष्क कोशिकाओं के विद्युत विभवों को ई.ई.जी. मशीन में स्थित प्रवर्धकों (एम्प्लीफायर) तक ले जाया जाता है, जहां इनका आकार कई गुना बढ़ा दिया जाता है। इस अभिबर्धित विद्युत द्वारा अनेक पेनों की एक शृंखला गतिमान होती है। धीमी गति से सरकते हुए एक लंबे कागज पर ये पेन, ग्राफ बनाते हैं। सिर या मस्तिष्क के भीतर कोई विद्युत धारा नहीं भेजी जाती है। अंदर पैदा होने वाली विद्युत को बाहर ग्रहण किया जाता है। सिर पर इलेक्ट्रोड चिपकाने के बिंदु नियत होते हैं। इस प्रणाली को 10-20 अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली कहा जाता है। इलेक्ट्रोड का सिर की त्वचा से संपर्क खूब अच्छा होना चाहिए। संपर्क बिंदु पर विद्युतीय प्रतिरोध न्यूनतम रखने के लिए एक जैली या पुट्टी लगाई जाती है। बाल शैम्पू से धुले हों तथा इनमें तेल न लगाया गया हो। विभिन्न बिंदुओं से जुड़े हुए इलेक्ट्रोडों को अलग-अलग क्रम व डिजाइनों में मशीन से जोड़ दिया जाता है ताकि विशिष्ट क्षेत्रों की खराबियों को प्रदर्शित किया जा सके। कम से कम 10 मिनट तक वास्तविक रिकार्डिंग की जानी चाहिए। मात्र कुछ पेज का अभिलेख लेने की प्रवृत्ति बुरी है। खराबी को बढ़ाकर, उसे प्रकट कराने वाली प्रक्रियाएं जरूर की जानी चाहिए, जैसे कि जल्दी-जल्दी गहरे सांस तथा तीव्र प्रकाश के झपकों द्वारा उद्दीपन। इन प्रक्रियाओं के न कराने से खराबी होते हुए भी प्रकट होने से रह जाती है। मिर्गी-रोधी दवाइयां रोकने की आवश्यकता नहीं है। जांच के पूर्व मरीज भूखा न रहे। नींद लाने वाली गोलियां दो सप्ताह पहले से रोक देनी चाहिए। जांच के समय वातावरण आरामदायक हो, कमरा हवादार व ठंडा हो। कमरा हवादार न होने और गर्मी अधिक होने से पसीना छूटता है। पसीने से जांच की गुणवत्ता प्रभावित होती है। अधिक ठंड से ठिठुरन पैदा होती है जो अभिलेख में अवांछित गड़बड़ी पैदा करती है। मरीज को बिस्तर या कुर्सी पर आराम से बैठा होना चाहिए तथा उसे मन व शरीर से शांत व तनाव-मुक्त होना

चाहिए। अच्छी जांच का सबसे महत्वपूर्ण पहलू है एक अनुभवी व प्रशिक्षित टेक्नीशियन जो समय-समय पर मरीज को सही निर्देश दे सके तथा अभिलेख में समस्त जानकारी ठीक से नोट कर सके। यह अत्यंत आवश्यक है क्योंकि अधिकांश ई.ई.जी. प्रयोगशालाओं में अभिलेखों की पड़ताल बाद में की जाती है। तकनीकी दृष्टि से असंतोषकारी अभिलेख व्यर्थ ही भ्रम पैदा करते हैं तथा गलत निष्कर्षों पर पहुंचाते हैं।

मस्तिष्क-विद्युत-अभिलेख से बीमारी के निदान में मदद मिलती है, मिर्गी के प्रकार को जाना जा सकता है, उपचार के लिए दिशा-निर्देश प्राप्त होता है, संभावित कारण का अनुमान लगता है और आगे चलकर बीमारी के भविष्य का अंदाज लगाने में मदद मिलती है। इस सबके बावजूद मूल रूप से मिर्गी का निदान दौरों का विस्तृत वर्णन सुनकर होना चाहिए। अस्पताल आने पर मिर्गी के सभी रोगियों की कम से कम एक ई.ई.जी. जांच जरूर की जानी चाहिए। यदि प्रथम ई.ई.जी. सामान्य पाई जाये और फिर भी नैदानिक रूप से मिर्गी होने की संभावना काफी हो, तो दूसरी बार ई.ई.जी. जांच, विशेषकर निद्रावस्था में की जानी चाहिए। अधिकांश अस्पतालों में 99 प्रतिशत मामलों में ई.ई.जी. जांच सामान्य अवस्था अर्थात् दो दौरों की अंतराल अवधि में की जाती है। ऐसा विरले ही होता है कि दौरा आने के समय ई.ई.जी. जांच की जा सके। ई.ई.जी. में पाई जाने वाली विकृति सदैव नहीं बनी रहती। संयोग ही होता है कि जांच के लगभग 10 मिनटों की अवधि में एक गड़बड़ी पैदा हो या न हो। हो सकता है कि गड़बड़ी जांच से कुछ समय पूर्व हुई हो अथवा जांच समाप्त होने के कुछ देर बाद हो। इसीलिए एक सामान्य ई.ई.जी. जांच हमेशा मिर्गी न होने की सूचक नहीं होती है। ई. ई.जी. की उपयोगिता व उससे प्राप्त सूचना के महत्व को आम जनता तथा सामान्य चिकित्सकों द्वारा भी अनावश्यक ही बढ़ा-चढ़ाकर बताया जाता है। ई.ई.जी. जांच करनेवाले विशेषज्ञ यदि अभिलेख की रिर्पोटिंग करते समय विकृति न होने पर भी उसके होने की गलती करें और उसे बढ़ा-चढ़ाकर बताएं तो और भी दुर्भाग्यशाली व खतरनाक होता है। इसलिए मिर्गी के रोगी से संबंधित सभी लोगों को ई.ई. जी. जांच की सीमाओं के बारे में अच्छी तरह समझना चाहिए।

ई.ई.जी. व मिर्गी का निदान

यह पहले ही अनेक बार स्पष्ट किया जा चुका है कि मिर्गी के निदान में ई. ई.जी. एकमात्र व अंतिम उपाय नहीं है। फिर भी उपचार के आरंभ में मिर्गी

के सबूत के रूप में कम से कम एक बार ई.ई.जी. जांच अवश्य की जानी चाहिए। यदि संयोग से ई.ई.जी. अभिलेखन के दौरान मरीज को दौरा आ जाये और फिर भी ई.ई.जी. में कोई खराबी न दिखाई पड़े तो निश्चय ही वह दौरा मिर्गी का दौरा नहीं होगा। यह याद रखना चाहिए कि कुछ मरीजों में मिर्गी-जन्य व बिना मिर्गी दोनों प्रकार के दौरे साथ-साथ आ सकते हैं। यह प्रश्न उठता है कि ऐसे मरीजों में पहली ई.ई.जी. जांच और उसके बाद नींद में की जानेवाली दूसरी ई.ई.जी. जांच दोनों सामान्य हों तो क्या करना चाहिए ? इसका यह उत्तर होगा कि चिकित्सीय लक्षणों के आधार पर मिर्गी की पुष्टि होने पर ई.ई.जी. सामान्य होने पर भी उपचार प्रारंभ कर देना चाहिए। विशेष परिस्थितियों में कुछ विशिष्ट प्रकार की ई.ई.जी. की जा सकती है जिनके बारे में आगे बताया जायेगा। ये जांच हैं—पूरी रात की निद्रावस्था ई.ई.जी. और जागरण के बाद की ई.ई.जी.। यह सही है कि कुछ बिलकुल सामान्य व्यक्तियों तथा कुछ मिर्गी रोगियों के माता-पिता अथवा सहोदर भाई-बहनों में रोग के लक्षण न होने पर भी ई.ई.जी. में खराबी पाई जा सकती है। इसलिए यह हमेशा याद रखना चाहिए कि रोग के चिकित्सीय लक्षण न होने पर भी केवल ई.ई.जी. जांच के आधार पर किसी व्यक्ति को मिर्गी रोगी नहीं करार देना चाहिए।

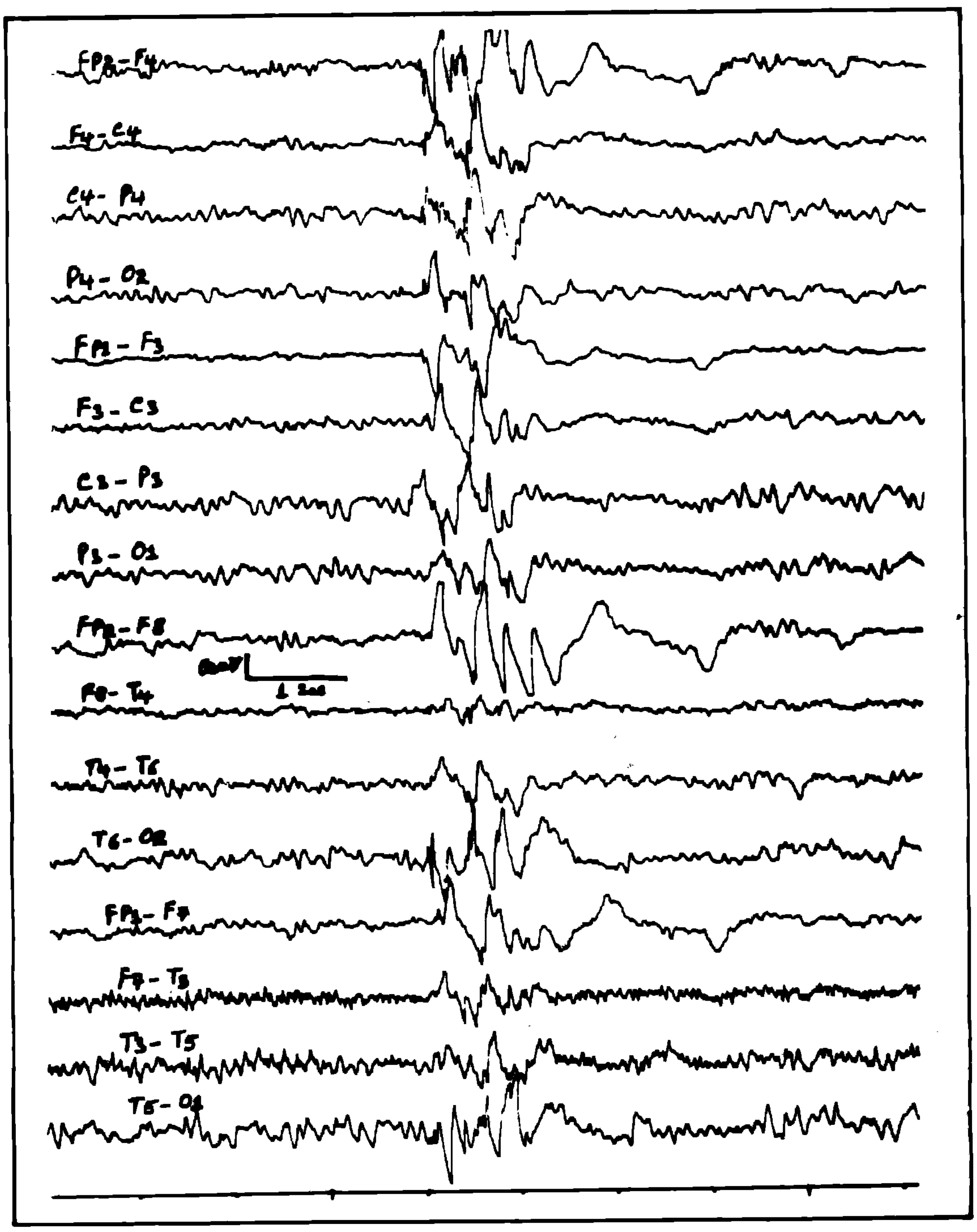
ई.ई.जी. व दौरों के प्रकार

मिर्गी के विभिन्न रूपों का निर्धारण करने में रोगी व चश्मदीद गवाहों द्वारा किया गया दौरे का विस्तृत चिकित्सीय वृत्तांत सर्वाधिक उपयोगी होता है। चिकित्सीय अनुमान की पुष्टि में ई.ई.जी. से मदद मिलती है। ऐसे दौरे जो ऊपरी तौर पर सर्वव्यापी प्रतीत होते हैं, अंततः एक लघु फोकस या विकार स्थान से उठने वाले हो सकते हैं। फोकस के अस्तित्व का पता लगाने में ई.ई.जी. से मदद मिलती है। प्रयोगशाला में विशिष्ट उद्दीपनों द्वारा रिफ्लेक्स एपीलेप्सी (प्रविवर्त मिर्गी) की पुष्टि भी ई.ई.जी. द्वारा की जा सकती है। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि मिर्गी होने या न होने के निदान की तुलना में मिर्गी के प्रकार का निर्धारण करने में ई.ई.जी. की उपयोगिता अधिक है। ई.ई.जी. विकृति के प्रकार व स्वरूप से अंतर्निहित रोगजनित प्रक्रियाओं का अनुमान लगाया जा सकता है और कुछ मामलों में संभावित कारण भी ज्ञात हो सकता है। मिर्गी रोगियों में पाई जाने वाली आम ई.ई.जी. विकृतियां हैं—शूक (स्पाइक), बहुशूक (शूक व तरंग), नुकीली तरंगें, विकार स्थानी शूक, धीमी गति तरंगों का लघु विस्फोट, एक पार्श्व विस्फोट

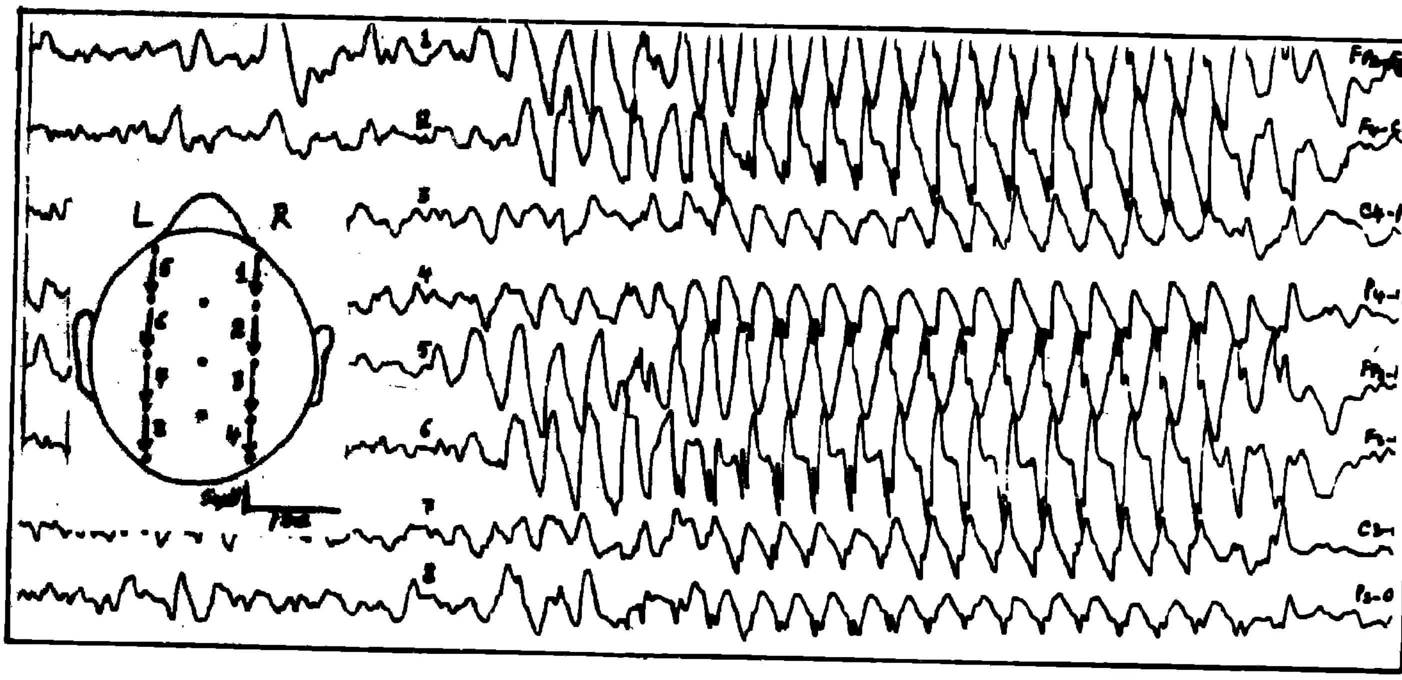
व सतत बनी रहने वाली विद्युत गड़बड़ी। पाठकों की जानकारी के लिए ई.ई. जी. विकृतियों के कुछ रूप चित्र 5 से 9 में दिए गये हैं।

ई.ई.जी. और उपचार

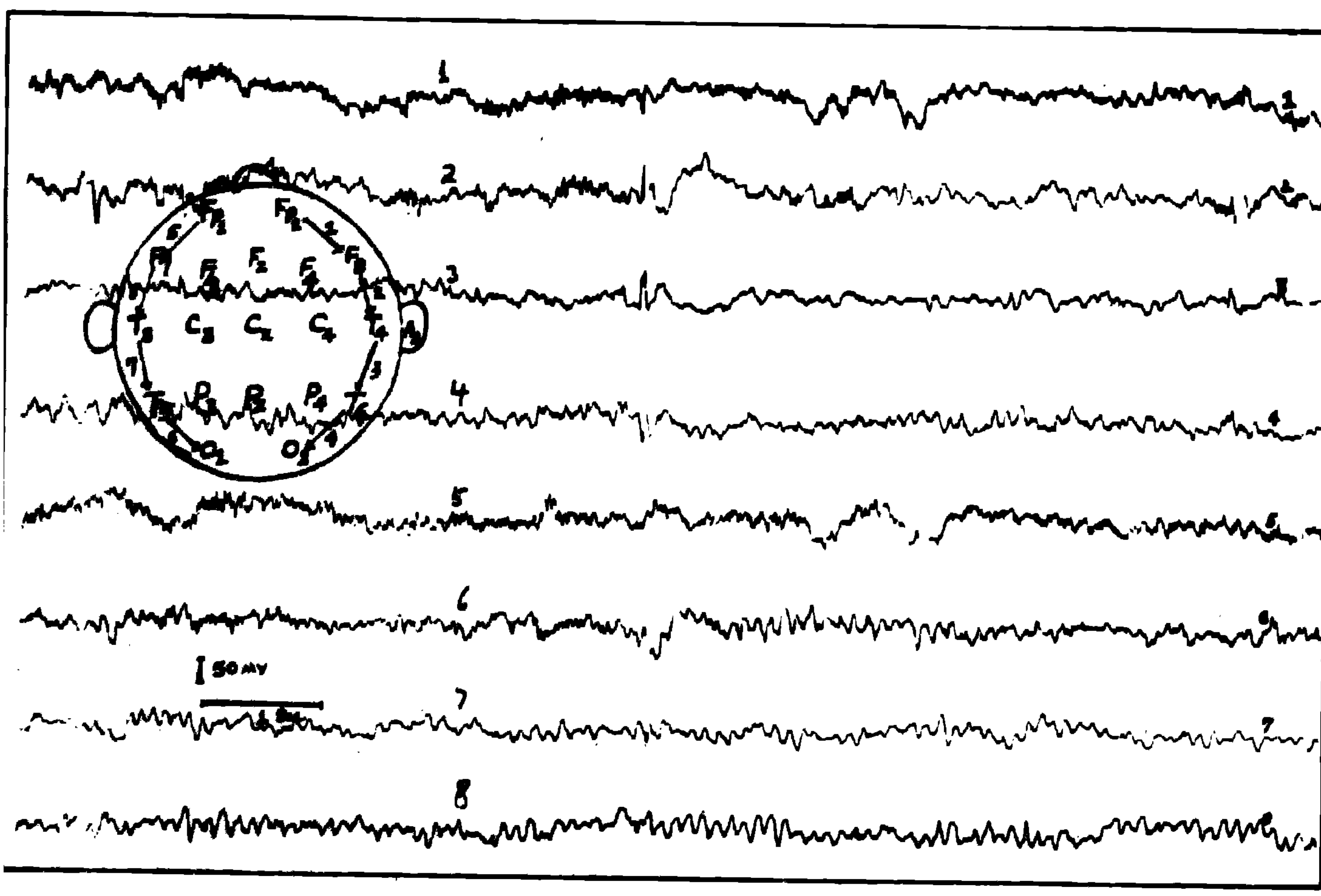
बहुत से रोगी और उनके रिश्तेदार उपचार के दौरान बार-बार ई.ई.जी. जांच कराना आवश्यक समझने लगे हैं। यहां तक कि अनेक चिकित्सक भी प्रत्येक बार रोगी के आने पर तथा हर दौरे के पश्चात् उसकी ई.ई.जी. करा लेते हैं। यह किसी भी प्रकार उचित नहीं है। एक बार उपचार आरंभ हो जाने के पश्चात् उसके प्रभाव व उसकी पर्याप्तता को मापने का श्रेष्ठ तरीका यह जानना है कि दौरे



चित्र 5. मस्तिष्क-विद्युत-अभिलेख (ई.ई.जी.)—शूक व तरंगों का सर्वव्यापी विस्फोट (ग्रांडमाल या अकड़न-झटके वाला दौरा)।

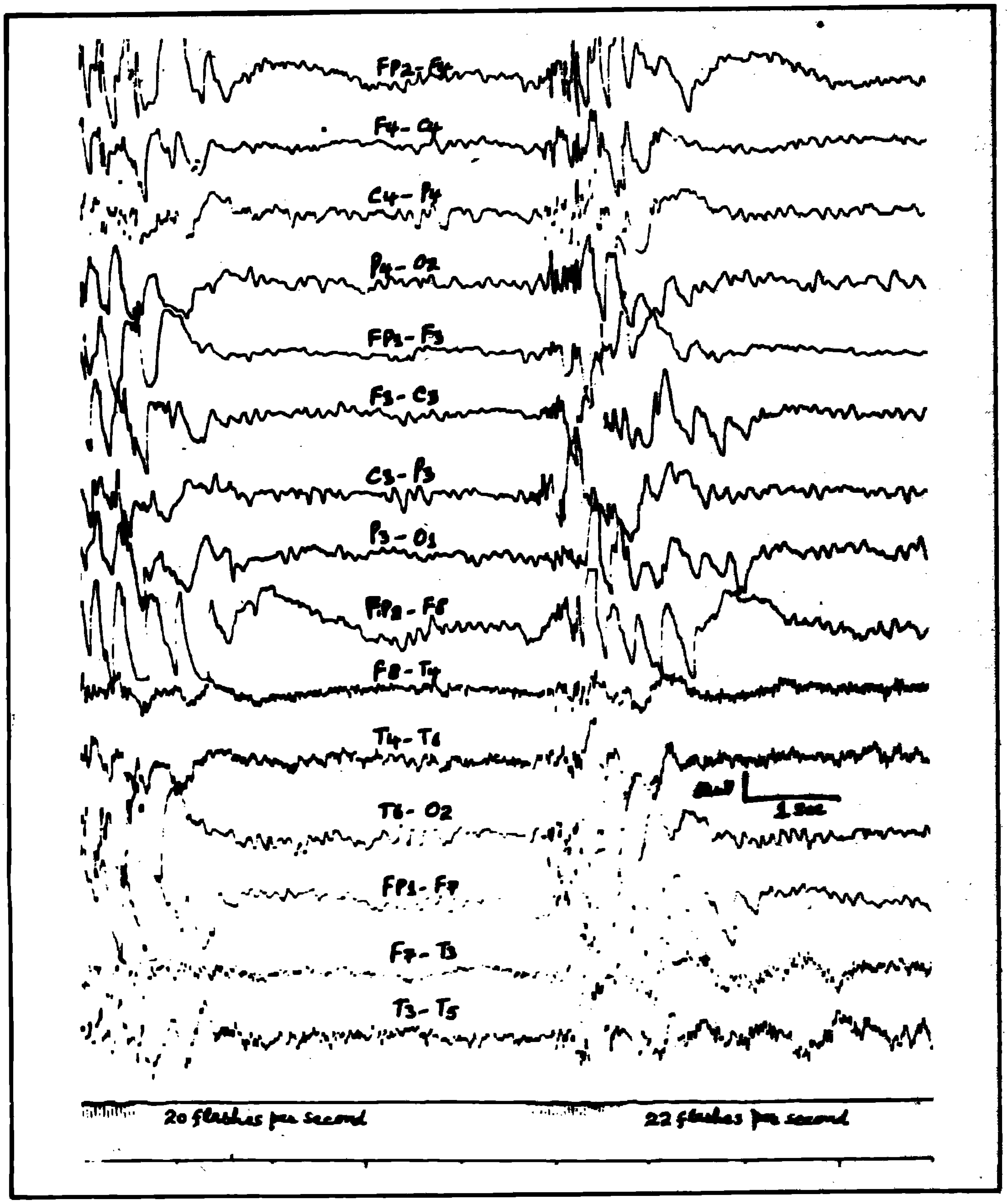


चित्र 6. मस्तिष्क-विद्युत-अभिलेख (ई.ई.जी.)—प्रति सैकेंड तीन की आवृत्ति वाला शूक-तरंगों का सर्वव्यापी विस्फोट (सामान्य अनुपस्थिति या पतीतमाल दौरा)।



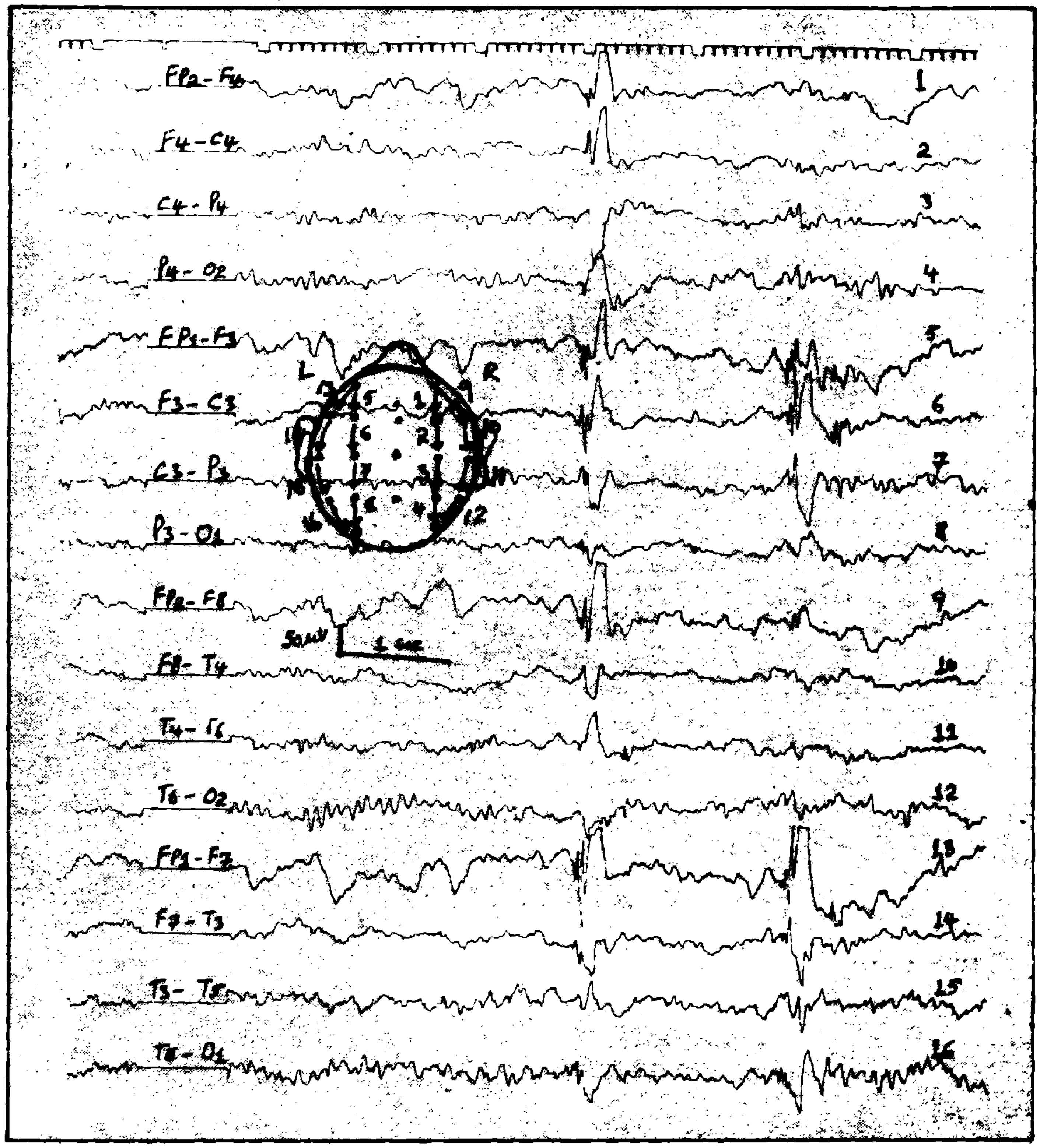
चित्र 7. मस्तिष्क-विद्युत-अभिलेख (ई.ई.जी.)—दाहिने टेम्पोरल खंड से उद्‌गम लेने वाला एकाकी शूक-विस्फोट (आंशिक जटिल दौरा)।

आये या नहीं अथवा उनकी अवधि, अंतराल व तीव्रता की जानकारी। कुछ परिस्थितियों में दुबारा ई.ई.जी. जांच तर्कसंगत हो सकती है, जैसे कि नयी औषधि का प्रयोग, ठीक से चुनी गयी औषधि के बावजूद लाभ न होना, औषधि के दुष्प्रभाव,



चित्र 8. मस्तिष्क-विद्युत-अभिलेख (ई.ई.जी.)–सर्वव्यापी शूक व तरंगों के दो विस्फोट जो क्षणिक उद्दीपन द्वारा पैदा हो रहे हैं (प्रकाश संवेदी प्रतिवर्त दौरा)।

एक से अधिक प्रकार के दौरे जिनका निदान वर्णन सुनकर न हो पाया हो, शल्य उपचार के पूर्व की जांच तथा शोध उद्देश्यों से। दौरों पर नियंत्रण होने के पश्चात् यह जानने की उत्सुकता बनी रहती है कि पूर्व ई.ई.जी. में मौजूद असामान्यताएं ठीक हुईं या नहीं। यह हमेशा संभव नहीं हो पाता है। नैदानिक स्तर पर सुधार होने तथा दौरों के रुक जाने के बावजूद ई.ई.जी. में खराबी बनी रह सकती है



चित्र 9. मस्तिष्क विद्युत अभिलेख (ई.ई.जी.)–शूक व तरंगों का एक लघु विस्फोट जो द्विपार्श्वीय व सर्वव्यापी है तथा एक और विस्फोट जो सिर्फ बाएं अवस्थित है। अधिक प्रवर्धक (चैनल) वाली मशीन का लाभ स्पष्ट नजर आता है।

(अथवा खराबी बढ़ सकती है), विशेषकर फोकल या विकार स्थानी मिर्गी के रोगियों में। यह पता है कि आंशिक व जटिल आंशिक दौरों का कार्बामाजेपाइन द्वारा उपचार करते समय, मायोक्लोनिक व सर्वव्यापी किस्म के दौरे अधिकता से आ सकते हैं। इसी प्रकार बेंजोडाइजेपाइन औषधियां सर्वव्यापी विकृति का शमन करते हुए फोकल या स्थानीय खराबी को जन्म दे सकती हैं। इन निरीक्षणों से भविष्य में औषधि को बदलने संबंधी मार्गदर्शन मिल सकता है।

ई.ई.जी. तथा उपचार की समाप्ति

दौरों से मुक्ति का एक लंबा समय गुजर जाने के बाद मिर्गी-रोधी दवाइयों का सेवन बंद करने से पूर्व अनेक मरीज और चिकित्सक भी पुनः ई.ई.जी. जांच कराने को प्रवृत्त रहते हैं। उपचार बंद करने का निर्णय लेने के संबंध में वे आशंकित रहते हैं। फिर भी इस स्थिति में ई.ई.जी. की पुनः जांच बिलकुल आवश्यक नहीं होती है क्योंकि उपचार बंद करने का निर्णय बीमारी के नैदानिक इतिहास (क्लीनिकल हिस्ट्री) पर निर्भर करता है, न कि ई.ई.जी. की खराबी पर। इस अवसर पर यदि ई.ई.जी. में खराबी पाई गयी, तो चिकित्सक अनावश्यक ही उपचार की अवधि बढ़ा सकते हैं। लंबे उपचार के बावजूद यह आवश्यक नहीं कि बाद में ई.ई.जी. जांच सामान्य हो जायेगी या दौरों की पुनरावृत्ति निश्चित ही रुक जायेगी। अतः मिर्गी-रोधी दवाइयों की मात्रा धीरे-धीरे कम करनी चाहिए और यदि 3 वर्ष तक मिर्गी का दौरा न पड़े तो उन्हें रोक देना चाहिए, फिर ई.ई.जी. चाहे जैसी भी क्यों न हो। कुछ चिकित्सक उपचार की समाप्ति पर ई.ई.जी. सामान्य होने के बाद भी समय-समय पर ई.ई.जी. कराते रहने की सलाह देते हैं। दौरों की अनुपस्थिति में महज ई.ई.जी. विकृति को इलाज से ठीक करने की आदत से बचना चाहिए। यदि दौरा पुनः आता है तो मिर्गी के नये रोगी के समान फिर से रोगी की जांच की जा सकती है।

ई.ई.जी. व शल्य-चिकित्सा

मिर्गी के बहुत थोड़े मरीजों को शल्य-चिकित्सा से मदद मिलती है। आंशिक या विकार स्थान से उठने वाली मिर्गी में शल्य उपचार इस बात पर निर्भर करता है कि मिर्गी रूपी विद्युतीय गड़बड़ी मस्तिष्क के किस सुपरिभाषित हिस्से से उत्पन्न हो रही है ? प्रायः सभी मामलों में यह उद्‌गम मस्तिष्कीय गोलार्धों के नवीनतम कार्टेक्स की परतों में या लिम्बिक खंड नामक रचनाओं में होता है। सामान्य मस्तिष्क-विद्युत-अभिलेख (ई.ई.जी.) का उद्देश्य इस गतिविधि स्थल का पता लगाना होता है। आमतौर पर की जाने वाली जांच शल्य-चिकित्सा जैसी बड़ी क्रिया के निर्णय हेतु पर्याप्त रूप से विश्वसनीय नहीं होती। अभिलेख रिकार्ड करने की विशेष तकनीकें जैसे कि स्फीनाइडल या नेजोफेरोंजियल कार्टेक्स आदि इन मामलों में आवश्यक होती है। शल्य-चिकित्या के समय कपाल-अस्थि खुल चुकने के बाद इलेक्ट्रोड सीधे मस्तिष्क की सतह पर रखकर 'कार्टेक्स-विद्युत-अभिलेख' प्राप्त करते हैं। इसके अतिरिक्त इलेक्ट्रोड मस्तिष्क के ऊतक में अलग-अलग गहराइयों

में धंसाकर वहां के भीतरी भागों की विद्युतीय गतिविधियों का अभिलेख प्राप्त किया जाता है। ये सुविधाएं कुछ गिने-चुने तंत्रिका शल्य-चिकित्सा (न्यूरो सर्जरी) केंद्रों पर उपलब्ध हैं, जो मिर्गी के शल्यक उपचार में रत हैं।

नयी तकनीकें

यह ऊपर बताया जा चुका है कि ई.ई.जी. की सामान्य जांच अनेक बार दोहराने पर भी मिर्गी के सुनिश्चित रोगियों में असामान्यता का पता नहीं चल पाता है। वृद्धावस्था में यकायक टपक पड़ने वाले दौरे (ड्राप अटैक) सदैव नैदानिक दृष्टि से कठिन सिद्ध होते हैं और आम ई.ई.जी. से कुछ पता नहीं चलता है। दौरों के सूक्ष्म पहलुओं को जानने-बूझने में सजग व बुद्धिमान व्यक्ति भी गलती कर सकते हैं। एक से अधिक प्रकार के दौरों तथा एक से अधिक प्रकार की ई.ई. जी. विकृतियों के आपसी संबंधों का अध्ययन जटिल होता है। नयी तकनीकें हैं—बेतार की ई.ई.जी. (दूर मापी), गतिशील मरीज की ई.ई.जी. व ई.ई.जी. के साथ वीडियो दृश्यावली का सम्मिश्रण। प्रारंभिक ई.ई.जी. जांच में मरीज को ई. ई.जी. मशीन के पास लेटे रहना पड़ता है और दस मिनट के वास्तविक अभिलेख के लिए प्रयोगशाला में 45 मिनट गुजारने पड़ते हैं। नयी तकनीकों द्वारा परिस्थितियों में सुधार हुआ है। टेलीमीटरी (दूर मापी ई.ई.जी. या बेतार की ई.ई.जी.) द्वारा मरीज के मस्तिष्क में उठने वाली विद्युतीय गतिविधि रेडियो तरंगों के माध्यम से कुछ दूर स्थित प्रयोगशाला में रखी मशीन तक पहुंचाई जाती है। टेलीफोन के तारों व तरंग आवृत्ति के माड्यूलेशन (एफ. एम. बैंड) द्वारा संदेश प्रेषण होता है। मरीज को एक नियत सीमा के भीतर रहना होता है। प्रयोगशाला में मशीन के समीप तकनीशियन की मौजूदगी जरूरी होती है जो उचित समय पर यंत्र की गति को नियंत्रित कर सके। गतिशील ई.ई.जी. इससे बेहतर है। मरीज अपने साथ छोटे, हल्का कैसेट-रिकार्डर कमर में बांधे रखता है। लगभग 24 घंटे की विद्युत गतिविधि इसमें टेप हो जाती है। मरीज अपना सामान्य काम करता रहता है, उसे अस्पताल परिसर में नहीं रुकना पड़ता। भरा हुआ कैसेट प्रयोगशाला में लाया जाता है, जहां उसे चलाकर दिन भर का रिकार्ड देख लेते हैं। प्रगति का एक और क्षेत्र है—ई.ई.जी. के साथ-साथ मरीज की गतिविधियों की वीडियो रिकार्डिंग। यह केवल विशेष केंद्रों में भर्ती किए गये मरीजों पर ही संभव है। ये नयी तकनीकें महंगी हैं। प्रति मरीज इनकी आर्थिक उपादेयता सीमित है। इनकी आवश्यकता कम ही मरीजों में पड़ती है, लेकिन इनसे प्राप्त जानकारी अधिकतम,

व सुनिश्चित प्रकार की होती है जो कि आम प्रयोगशालाओं में सोची भी नहीं जा सकती।

ई.ई.जी. व अन्य जांच

कम्प्यूटरीकृत टोमोग्राफी (सी. टी. स्कैन या केट स्कैन) तथा एम. आर. आई. स्कैन (चुंबकीय अनुनाद प्रतिबिंब) नामक नये यंत्रों से मस्तिष्क की भीतरी रचना के सटीक चित्र प्राप्त किये जा सकते हैं, परंतु कार्य संबंधी परिवर्तनों को नहीं दर्शाया जा सकता। कार्य संबंधी परिवर्तनों के अनेक प्रकार होते हैं जैसे कि विद्युत गतिविधि, रक्त प्रवाह, आक्सीजन व ग्लूकोज का उपभोग तथा अन्य चयापचयी गतिविधियां। ई.ई.जी. जांच द्वारा रचनात्मक विकृति की जानकारी नहीं मिलती, परंतु विद्युतीय कार्य का भली प्रकार प्रदर्शन होता है। लाक्षणिक मिर्गी या द्वितीयक मिर्गी तक में रचनात्मक विकृति आने के पूर्व ही कार्यात्मक परिवर्तन प्रकट हो सकते हैं और इसीलिए ई.ई.जी. द्वारा रोग का जल्दी पता लगाया जा सकता है। अब यह स्पष्ट हो गया है कि एम.आर.आई. सी.टी. स्कैन से अधिक उन्नत और श्रेष्ठ तकनीक है। इसमें एक्स-रे विकिरण का कोई खतरा नहीं होता है। परंतु एम. आर. आई. बहुत अधिक महंगी है। पाठकों की जानकारी के लिए सी.टी. तथा एम.आर.आई. स्कैन पर देखी जाने वाली कुछ आम रोग दशाओं को प्लेट 1-8 में दिखाया गया है। आमतौर पर अब यह समझ लिया गया है कि मिर्गी के संदर्भ में सी.टी. स्कैन, एम.आर.आई. स्कैन तथा ई.ई.जी. आदि विभिन्न जांचें एक दूसरे की प्रतियोगी नहीं वरन पूरक हैं। उनके संयुक्त उपयोग से लाक्षणिक मिर्गी या द्वितीयक मिर्गी के लिए जिम्मेदार, रचनात्मक व कार्यात्मक दोनों प्रकार की गड़बड़ी का मिला-जुला लेखा खींचा जा सकता है। पी. ई. टी. अथवा पाजीट्रान उत्सर्जन टोमोग्राफी नामक तकनीक ने मिर्गी रोग की रोकथाम में अपनी उपयोगिता स्थापित कर ली है। इससे मिर्गी उद्गम केंद्र (सक्रिय फोकस) की सटीक पहचान संभव हो पाती है। बेहद खर्चीली होने से पी. ई. टी. स्कैन तकनीक अभी भी मुख्यतया शोध उद्देश्यों में प्रयुक्त होती है। पश्चिम के विकसित देशों तक में यह तकनीक अभी तक अधिक अस्पतालों में नहीं पहुंची है। चुंबक-मस्तिष्क-अभिलेख (मेगनेटोएन्सेफेलोग्राफ) भी मिर्गी रूपी शूक तरंगों व उनके उद्गम केंद्र (स्पाइक फोकस) को पहचानने में अन्य से श्रेष्ठ है। इन सबके बावजूद मिर्गी रोग के उपचार में ई.ई.जी. (विद्युत-मस्तिष्क-अभिलेख) को विस्थापित कर पाना अन्य तकनीकों के लिए संभव नहीं होगा।

रोग की जांच

मिर्गी का निदान मूल रूप से रोगी, रिश्तेदारों व प्रत्यक्षदर्शियों से प्राप्त वर्णन (इति-वृत्त) के आधार पर किया जाता है। आधुनिक यंत्रों पर विश्वास और निर्भरता के इस युग में नैदानिक इति-वृत्त तथा शारीरिक परीक्षण की उपेक्षा करने की प्रवृत्ति बढ़ रही है। इससे भी बुरा है चिकित्सीय जांच से पूर्व मरीजों व रिश्तेदारों द्वारा स्वयं जांच कर लेना। इसके परिणाम बुरे होते हैं। किसी भी बीमारी में ऐसा नहीं किया जाना चाहिए और मिर्गी अपवाद नहीं है। बहुत से मरीजों को मिर्गी नहीं होती, परंतु इन गलत प्रवृत्तियों के कारण उनका व्यर्थ ही मिर्गी के लिए उपचार होता रहता है। एक बार उपचार आरंभ हो जाने के पश्चात् अन्य चिकित्सक के लिए उसे रोकना मुश्किल कार्य है।

मिर्गी का निदान करने के बाद अगला कदम होना चाहिए उसका ई.ई.जी. परीक्षण, मिर्गी चाहे किसी भी प्रकार की क्यों न हो। कुछ चिकित्सकों के मत में मिर्गी का होना स्पष्ट हो जाने की दशा में ई.ई.जी. की आवश्यकता नहीं होती है। मेरी राय में मिर्गी के प्रत्येक मामले में ई.ई.जी. की जांच जरूर की जानी चाहिए। मस्तिष्क-विद्युत-अभिलेख वाले अध्याय में इसके कारणों की चर्चा की जा चुकी है। लाक्षणिक या द्वितीयक मिर्गी या तो फोकल (स्थानीय अथवा स्थानिक) या सर्वव्यापी हो सकती है। लाक्षणिक मिर्गी के मूल में अनेक प्रकार की रोगकारी विकृतियां होती हैं, जैसे कि चोट के घाव, संक्रमण, रक्त नलिकाओं का बेरूप विकास, ट्यूमर या गांठ, जन्मजात विरूपताएं, क्षयकारी बीमारियां, चयापचयी तथा अंतःस्रावी विकार। यह सूची लंबी है। दूसरी बात जो याद रखनी चाहिए वह यह है कि अधिकांश मिर्गी, प्राथमिक अथवा अज्ञात-कारण होती है। तीसरे जिन मामलों के कारण ज्ञात हों (लाक्षणिक मिर्गी) उनमें से भी बहुत थोड़े ही मरीजों

में किसी विशिष्ट उपचार या शल्यक उपचार की आवश्यकता पड़ती है। चौथी महत्वपूर्ण बात, प्रत्येक व्यक्ति को अपने क्षेत्र में अधिक होने वाली बीमारियों की जानकारी होनी चाहिए। उदाहरणार्थ, पश्चिमी देशों की तुलना में भारत में मस्तिष्क क्षय रोग अधिक होता है। सिस्टीसरकोसिस रोग भारत के कुछ हिस्सों में कम तो कुछ हिस्सों में अधिक पाया जाता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि पूर्ण और प्रभावकारी उपचार के लिए अंतर्निहित विकृति का ज्ञान होना आवश्यक है। यह निर्णय लेना काफी कठिन होता है किसी रोगी में रोग के कारण का पता लगाने के लिए कितने और किस तरह के परीक्षण किए जाने चाहिए। नयी और परिष्कृत तकनीकें बहुत प्रभावशाली होती हैं पर साथ में बहुत खर्चीली भी। विकासशील देशों में वह भी गरीब मरीजों के लिए यह प्राथमिकताओं का प्रश्न बन जाता है। इसके लिए सर्वमान्य दिशा-निर्देश देना संभव नहीं है। प्रत्येक चिकित्सक को अपनी चिकित्सीय बुद्धि, अनुभव तथा अन्तःप्रज्ञा के आधार पर निर्णय लेना होता है कि किसी एक मरीज में किस सीमा तक जांच-परीक्षण किए जायें। प्रत्येक मरीज में प्रत्येक जांच निदान की दिशा में कोई न कोई सकारात्मक सा नकारात्मक जानकारी जरूरी मिलनी जरूर मिलनी चाहिए। नैदानिक स्तर पर जो आरंभिक निदान बनाया गया है, आगे की जांच उसी पर निर्धारित होती है।

जिन आम अवस्थाओं को ध्यान में रखा जाना चाहिए उनमें प्रमुख हैं– टयूबरक्यूलोमा, मवाद का फोड़ा, सिस्टीसरकोसिस, ट्यूमर या गांठ, रक्त-नलिकाओं का विरूप गुच्छा, तंत्रिका कोशिकाओं व रक्त नलिकाओं के विकार। यह सूची अनन्त है। संक्रमणों, रक्त विकारों, अल्प शर्करा रक्तता, अल्प कैल्शियम रक्तता तथा अन्य विकारों में रक्त विज्ञानी एवं जैव रासायनिक जांच काफी उपयोगी है। कुछ रोगियों में उपत्वचीय गांठों अथवा मस्तिष्क की बायोप्सी की जरूरत पड़ सकती है। खोपड़ी का एक्सरे केवल कुछ मामलों, जैसे–बढ़े हुए अन्तःकपाल तनाव, अधिक कैल्शियम जमा हो जाने से होने वाली विकृतियों, रक्त वाहिकाओं से संबंधित रोगों, अस्थि क्षय अथवा नयी अस्थि निर्माण जैसे अस्थि विकारों, अस्थि भंग, मस्तिष्क क्षय आदि में उपयोगी साबित हो सकता है। क्षय रोग, सिस्टीसरकोसिस रुग्णता और प्लाज़्मा विषाक्तता जैसे रोगों का पता लगाने के लिए प्रतिरक्षा नैदानिक तकनीकों का विकास किया जा रहा है। कुछ मामलों में प्रमस्तिष्क मेरु द्रव की जांच आवश्यक हो सकती है। ऐंजियोग्राफी से रक्त वाहिकीय विक्षतियों का पता लग सकता है। कम्प्यूटराइज्ड टोमोग्राफी (सी.टी.) का लाभ विश्व में काफी लोगों को मिलने लगा है। सी.टी. स्कैन से प्रारंभिक अवस्था में

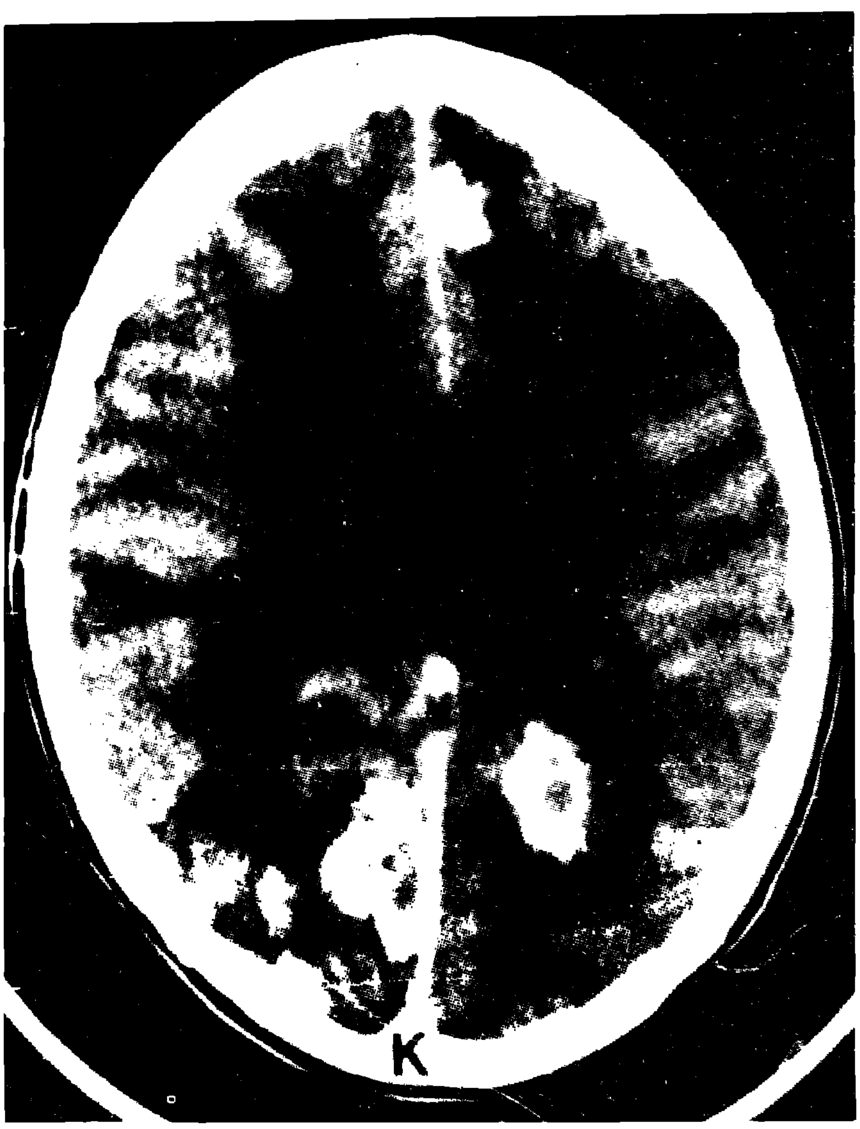
ही ट्यूमर होने की जानकारी मिल सकती है। रक्त वाहिकीय विक्षतियों की भी पहचान की जा सकती है। चुंबकीय अनुनाद स्केनिंग (एम.आर.आई.) और भी बेहतर तकनीक है। पाजीट्रान उत्सर्जन स्कैनिंग (पी.ई.टी), दुनिया की गिनी-चुनी प्रयोगशालाओं में, शोध के साधन के रूप में प्रयुक्त होती है। इसकी सहायता से दौरे के दौरान व दो दौरों के मध्य की अवधि में मिर्गीजनक विकार का पता लगाया जा सकता है (प्लेट 1 से 8)।

सभी को इन समस्त नयी तकनीकों की सीमाओं को समझ लेना चाहिए। यदि मिर्गी के हर मरीज की हर एक जांच की जानी लगे तो विश्व के समृद्धतम देश भी उनका खर्चा नहीं उठा पायेंगे। विकासशील देशों में यह कतई संभव नहीं है।

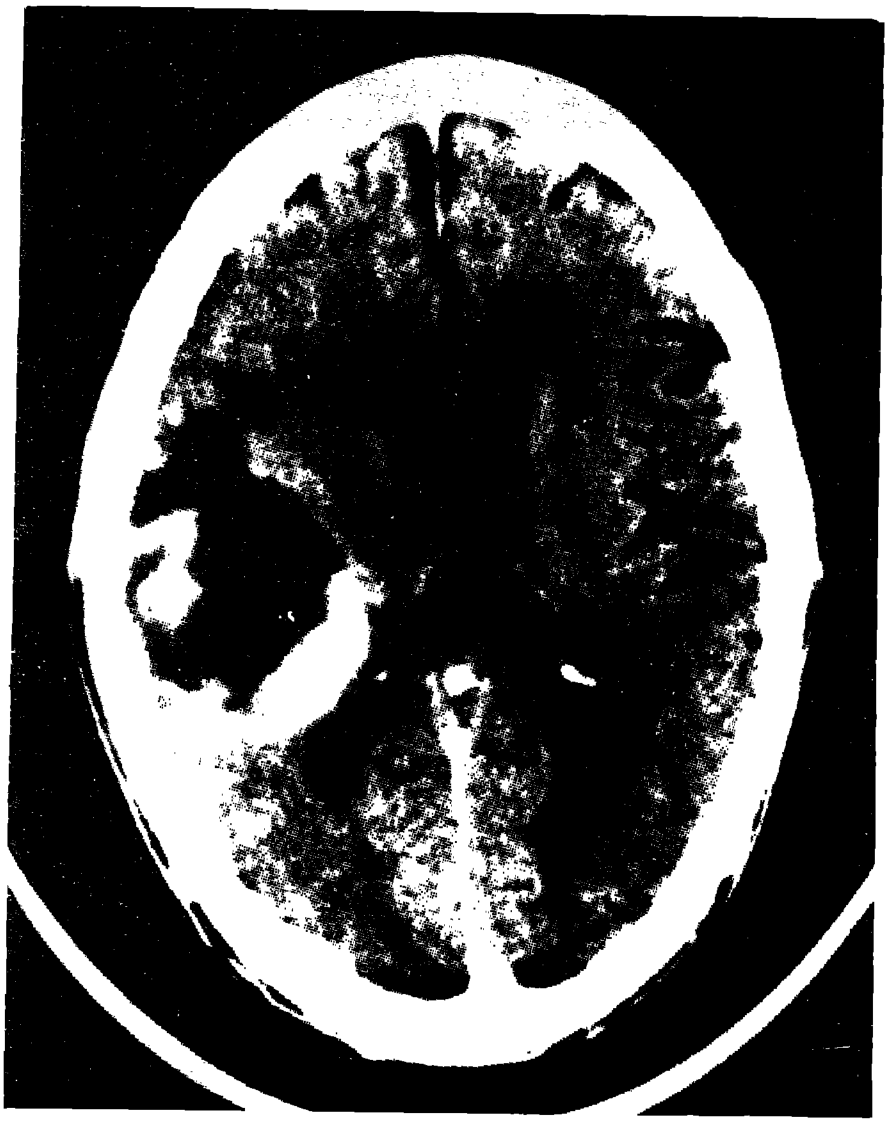
सी.टी. स्कैन में प्रदर्शित विकृति तथा नैदानिक परिदृश्य का तालमेल देखा जाना चाहिए। बिना सोचे-समझे उक्त विकृति को मिर्गी का कारण नहीं मान लेना चाहिए। कुछ मरीजों में विशेष परिस्थितियों में जांच परीक्षणों की पुनरावृत्ति करनी पड़ती है। मरीज की नैदानिक आवश्यकताओं के आधार पर, उपचार करने वाला चिकित्सक, पुनः जांच का निर्णय ले सकता है।



प्लेट 1
सी. टी. स्कैन द्वारा मस्तिष्क का बिंब। लघु गुहाओं वाले तथा कैल्शियम युक्त सिस्टीसरकोसिस दिखाई पड़ रहे हैं।

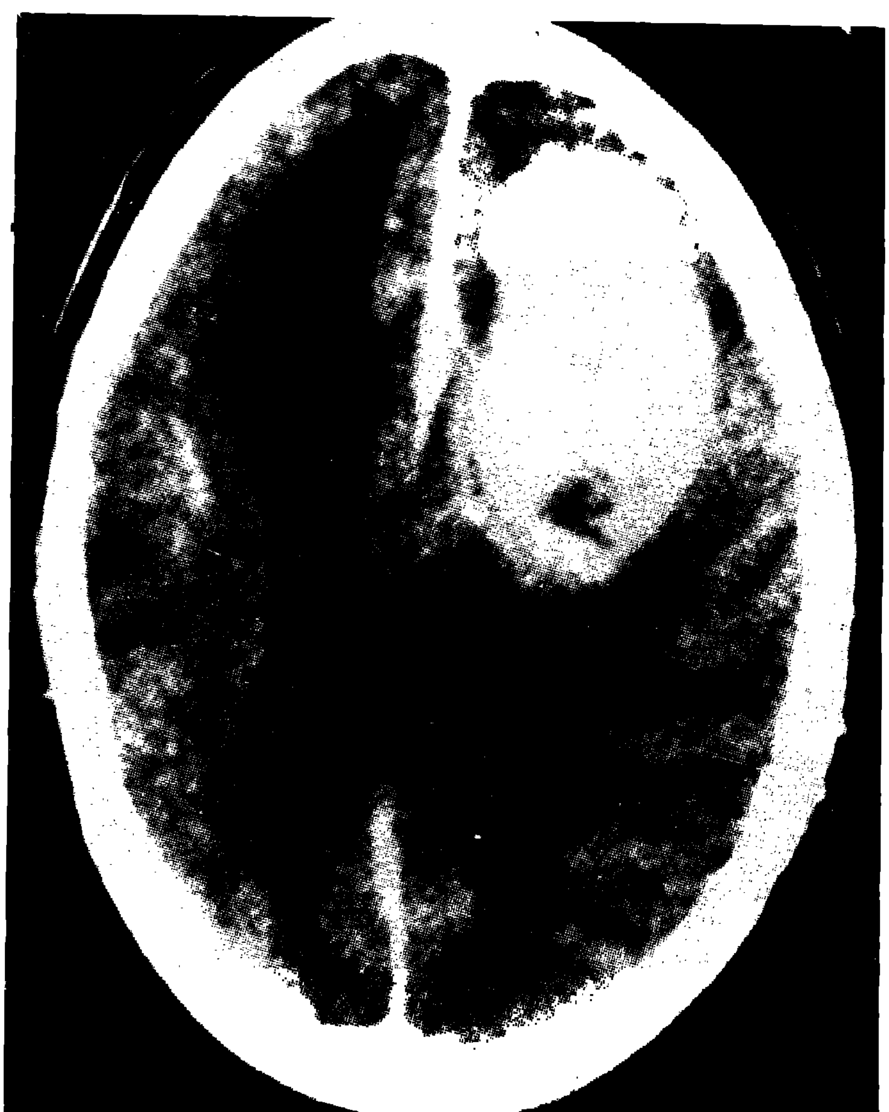


प्लेट 2
सी. टी. स्कैन अनेक ट्यूबरक्यूलोमा (टी. बी. की गांठें) प्रदर्शित करते हुए।



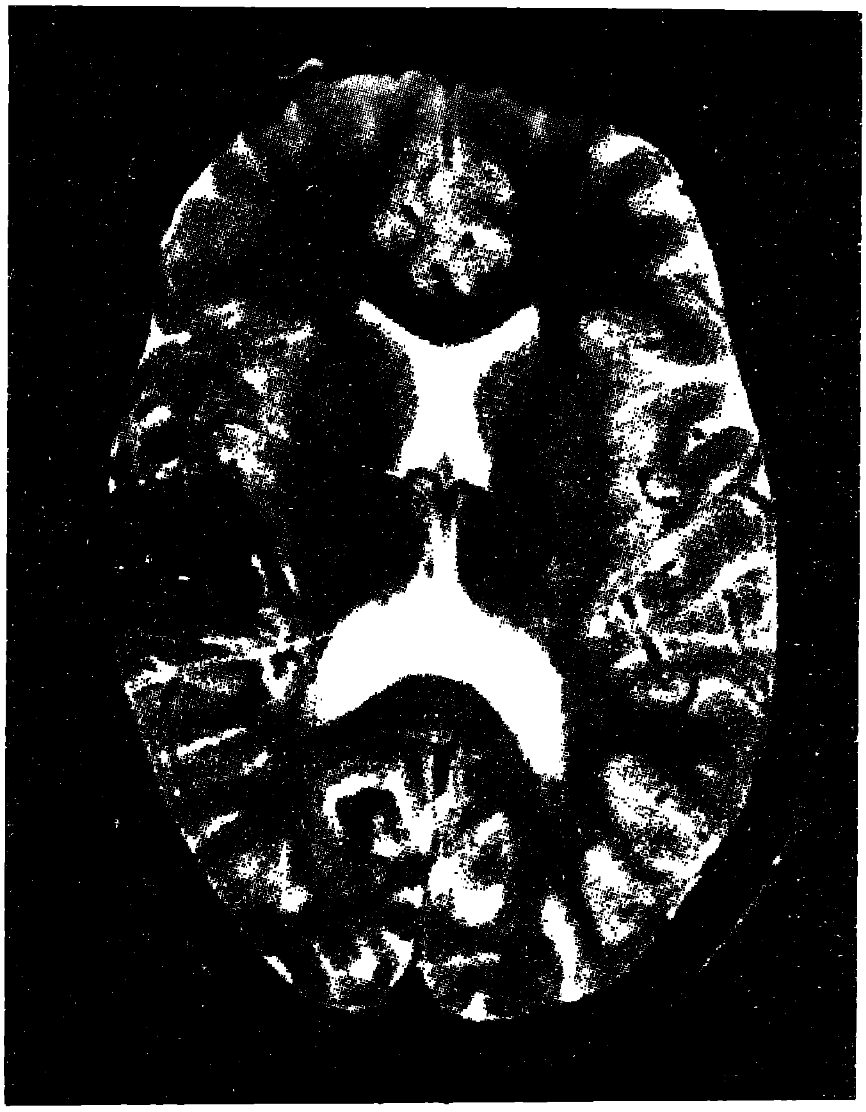
प्लेट 3

सी. टी. स्कैन ग्लियोमा (मस्तिष्क में ट्यूमर या गांठ) प्रदर्शित करते हुए।

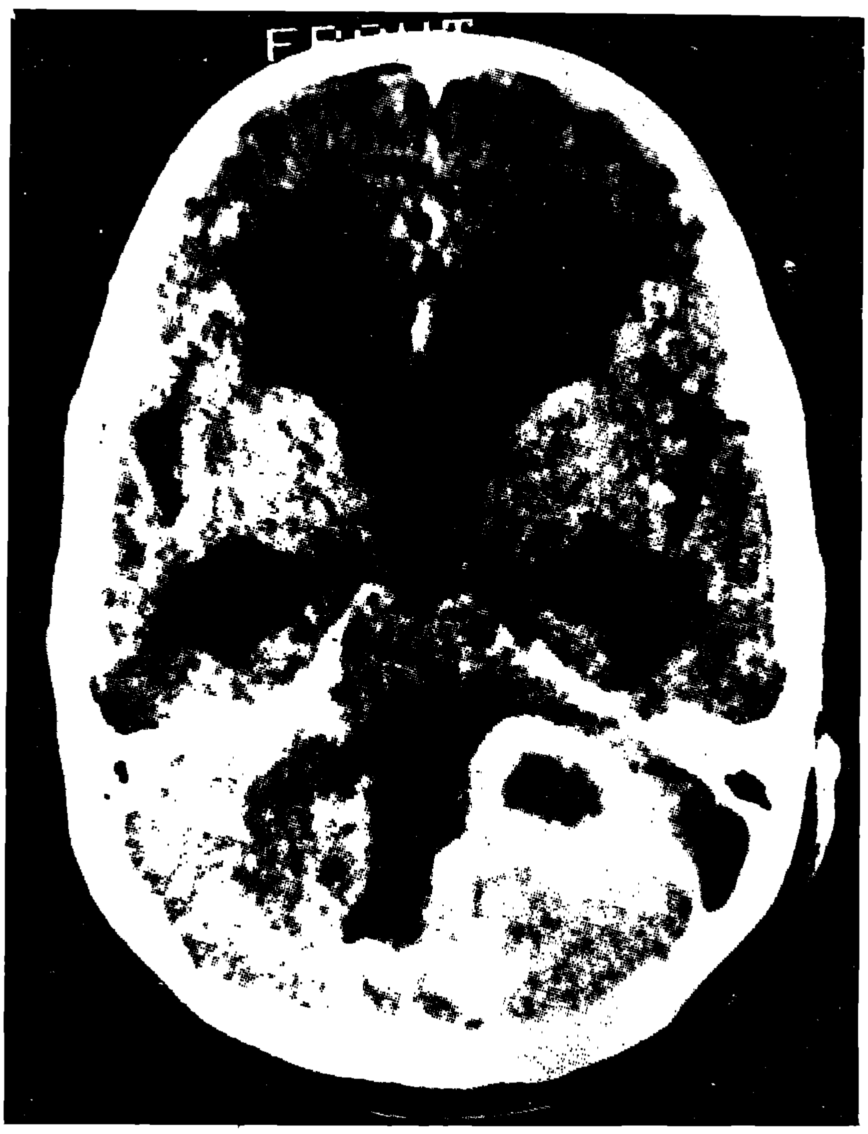


प्लेट 4

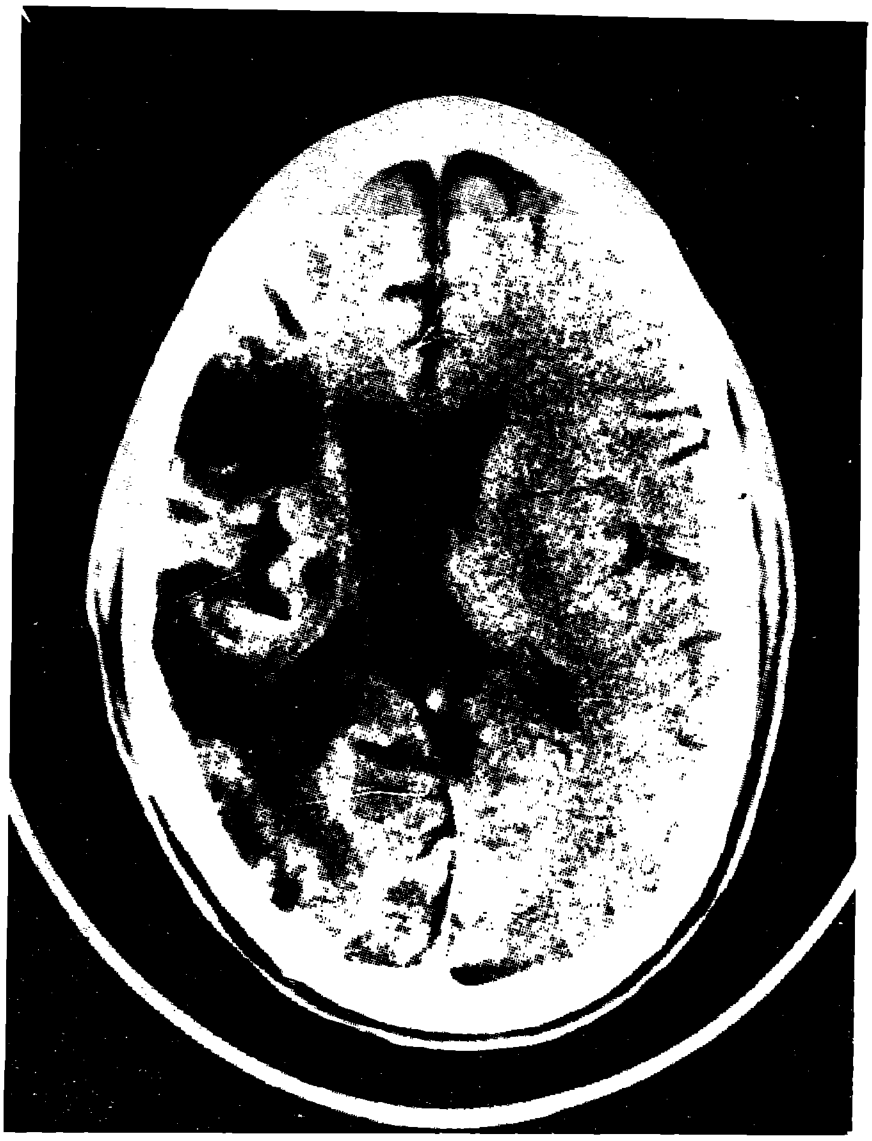
सी. टी. स्कैन मेनिन्जियोमा (एक अन्य प्रकार का ट्यूमर) प्रदर्शित करते हुए।



प्लेट 5
एम. आर. आई. स्कैन
आरटीरियो-वीनस मैलफार्मेशन (धमनियों व शिराओं का मिला-जुला गुच्छा) प्रदर्शित करते हुए।



प्लेट 6
सी. टी. स्कैन—अनुमस्तिष्क (सेरीबेलम) में टी. बी. की गांठ व वेंट्रिकल्स में अधिक द्रव पदार्थ का भर जाना (हायड्रोसिफेलस) प्रदर्शित करते हुए।



प्लेट 7

सी. टी. स्कैन–रक्त प्रभाव में अवरोध होने से मस्तिष्क के एक हिस्से में क्षति (इन्फार्क्शन) का प्रदर्शन। इन मरीजों को मिर्गीनुमा दौरे आए थे।



प्लेट 8

सी. टी. स्कैन–एक अन्य मरीज जिसे मिर्गीनुमा दौरे आए थे। मस्तिष्क में आंतरिक रक्तस्राव व जमा हुआ खून।

उपचार

मिर्गी के उपचार में यह याद रखना सबसे महत्वपूर्ण हे कि मिर्गी का उपचार, चाहे जिस औषधि से हो, एक बार आरंभ हो जाने के बाद, लंबे समय तक चलता है। कभी-कभी तो जीवन भर लगातार अथवा बीच-बीच में थोड़ा अंतराल देकर चलता है। कुछ अपवादों को छोड़कर अधिकांश प्रकार की मिर्गी का नियंत्रण संभव है, परंतु उन्हें पूर्ण रूप से मिटाना संभव नहीं। मिर्गी के संबंध में दूसरा महत्वपूर्ण पहलू यह है कि मिर्गी का आरंभ प्रायः जीवन के पूर्वार्द्ध में, युवावस्था में होता है। इस उम्र में शिक्षा, व्यावसायिक प्रशिक्षण, नया उद्यम व सामाजिक जिम्मेदारियां आदि महत्वपूर्ण कार्य संपन्न होते हैं। पचहत्तर प्रतिशत मामलों में मिर्गी 17 वर्ष की आयु से पहले शुरू होती है। तीसरा महत्वपूर्ण पहलू है कि औषधि का उपयोग मिर्गी के पूर्ण उपचार के अनेक पहलुओं में सिर्फ एक है। अच्छी जीवन शैली के लिए समान रूप से महत्वपूर्ण अन्य पहलुओं में प्रमुख हैं— व्यवसाय, मनोवैज्ञानिक स्थिति, आर्थिक स्थिति और सामाजिक स्थिति। मिर्गी की चिकित्सा के लिए निम्न प्रकार के उपचार उपलब्ध हैं :

- औषधीय (मेडिकल)
- शल्यक उपचार (सर्जिकल)
- सामान्य

औषधीय

मिर्गी-रोधी औषधियों से उपचार का उद्देश्य है लंबे समय तक औषधियों के दुष्प्रभाव के बिना सभी दौरों को पूरी तरह रोक देना तथा ई.ई.जी. (मस्तिष्क-विद्युत-अभिलेख) में मिर्गी-रूपी विकृतियों को पूरी तरह दमित कर देना, ताकि मिर्गी के दौरे आने

की प्रवृत्ति समाप्त हो जाये और औषधियों का उपयोग बंद किया जा सके। वर्तमान परिस्थितियों में बहुत सारे मरीजों में औषधि उपचार के इन सभी उद्देश्यों को पूरी तरह प्राप्त कर पाना संभव नहीं लगता है। फिर भी बीसवीं शताब्दी में नयी-नयी और अधिक प्रभावकारी औषधियों के विकास से दौरों पर नियंत्रण पाना संभव होता जा रहा है। उन्नीसवीं शताब्दी में अनेक वर्षों तक ब्रोमाइड्स उपयोग होता था। सन् 1912 में चिकित्सीय उपयोग के लिए फीनोबार्बीटोन उपलब्ध हुई। प्रारंभ में मिर्गी रोग के उपचार का उद्देश्य महज रोगी को दौरों से मुक्त रखने तक सीमित रहता था। परंतु बार-बार मिर्गी रोग को पूरी तरह साध्य कर पाने की चाहत ने सामाजिक तथा पुनर्वास संबंधी उपायों के साथ नयी औषधियों के व्यापक तथा सटीक उपयोग पर जोर दिया। परंतु अनेक प्रगामी तंत्रिका रोगों तथा अन्य विकासजन्य विकारों के कारण यह लक्ष्य सीमित और काल्पनिक ही साबित हुआ है।

नया सीखने तथा बुद्धि व्यवहार जैसे संज्ञानात्मक कार्यों पर मिर्गी-रोधी औषधियों के दुष्प्रभावों को लेकर लोग प्रायः चिंतित रहते हैं। बुद्धि विकास में यदि कमी हो भी तो उसका प्रमुख कारण औषधियां नहीं, बल्कि वही मूल बीमारी या रोग-अवस्था होती है जिसके द्वारा मिर्गी पैदा हुई। इसके अतिरिक्त मिर्गी अवस्था स्वयं अनेक परिवर्तन पैदा करती है। मस्तिष्क में रासायनिक, चयापचयी क्रियाएं बदल जाती हैं। तंत्रिका प्रेषक (न्यूरोट्रांसमीटरों) की उत्तेजना व दमन करने वाली क्रियाओं का संतुलन बिगड़ जाता है। औषधियों के दुष्प्रभाव निश्चय ही कम हैं, खासतौर से तब जबकि एकल-औषधि उपचार किया जा रहा हो।

सामान्य सिद्धांत

निदान

औषधि उपचार आरंभ करने के पूर्व सही निदान नितांत आवश्यक है। मिर्गी का निदान सकारात्मक कसौटी पर आधारित हो, अर्थात् मिर्गी के विशिष्ट लक्षण व चिह्न मौजूद हों। निदान नकारात्मक कसौटी पर आधारित नहीं होना चाहिए, अर्थात् मिर्गी से मिलती-जुलती अन्य बीमारियों के विशिष्ट लक्षण व चिह्न अनुपस्थित होने मात्र से मिर्गी का निदान नहीं कर लिया जाना चाहिए। संदेह की स्थिति में प्रतीक्षा करें, ताकि और प्रमाण प्रकट हो जायें। अवलोकन की इस अवधि में मरीज को कोई नुकसान नहीं होगा। अधिक नुकसान तब होगा जब रोग न

होने पर भी मिर्गी का उपचार आरंभ कर दिया जाये। अवलोकन की इस अवधि में मिर्गी-रोधी दवाइयां न देने के कारण यदि मरीज को दौरे आ जायें तो चिकित्सक को स्वयं अपराधी नहीं मानना चाहिए। मरीजों को भी नहीं सोचना चाहिए कि चिकित्सक लापरवाह या अयोग्य है। मरीज व रिश्तेदारों को समझ लेना चाहिए कि किसी भी डाक्टर के लिए नुस्खा लिख देना बहुत आसान है, जबकि विश्वसनीय निदान की प्रतीक्षा में नुस्खा लिखने से बचना कहीं अधिक कठिन है।

अकेला दौरा

प्रथम अकेले दौरे का आमतौर पर उपचार नहीं किया जाता है, विशेष रूप से उस परिस्थिति में जब दो बार की ई.ई.जी. जांच (सामान्य तथा निद्रावस्था) सामान्य पाई जायें। यदि विकृति मामूली हो, तो दूसरे दौरे की प्रतीक्षा की जानी चाहिए। प्रथम दौरे का उपचार न करने के पक्ष में तर्क यह है कि हो सकता है दूसरा दौरा कभी न आये, या अनेक महीनों या वर्षों बाद आये। यदि ई.ई.जी. असामान्य है और असामान्यता गंभीर किस्म की है तथा मरीज का व्यवसाय इस प्रकार का है जिसमें उसे दौरे के दौरान गंभीर चोट लग जाने का खतरा है, तो उसे दवाइयां लेने की सलाह दी जा सकती है। चिकित्सक को प्रत्येक मरीज में दूसरे दौरे की आशंका का अनुमान सावधानीपूर्वक लगाना चाहिए। इस बात की अधिक संभावना होती है कि दूसरा दौरा एक वर्ष के भीतर ही आयेगा। प्रथम अकेला दौरा कभी-कभी अंदर छिपी, ठीक हो सकने वाली बीमारी के लक्षण के रूप में आ सकता है। इन परिस्थितियों में सभी जरूरी जांच-परीक्षण किये जाने चाहिए।

दौरों की आवृत्ति

मिर्गी की बीमारी की अवधि तथा दौरों की कुल संख्या के बारे में अधिकतम जानकारी एकत्र की जानी चाहिए। अज्ञान व पूर्वाग्रहों के कारण अनेक मरीज देर से उपचार हेतु आते हैं। उन्होंने या तो कोई औषधि ली ही नहीं होती या उपचार की अन्य स्थानीय विधियों यथा आयुर्वेद, होम्योपैथी का उपयोग किया होता है।

दौरों को बढ़ावा देने वाले कारण

प्रत्येक मरीज से निम्न कारकों के बारे में पूछा जाना चाहिए—सांस का रोकना, मानसिक तनाव, स्त्रियों में मासिक धर्म अथवा मासिक धर्म के पूर्व की स्थिति,

शारीरिक थकान, नींद का पूरा न होना या जागरण, भावात्मक उतार-चढ़ाव, भूख व उपवास। दिन-रात के काल-चक्र, मौसम संबंधी परिवर्तन, पूर्णिमा तथा अमावस्या अथवा ग्रहण मनोवैज्ञानिक प्रभावों से दौरों की आवृत्ति पर प्रभाव डाल सकते हैं। इन जाने-माने तात्कालिक कारणों का नियंत्रण करके औषधि उपचार की प्रभावशीलता बढ़ाई जा सकती है।

दौरों की तीव्रता

मिर्गी के इस पहलू को लेकर कुछ गलतफहमियां हैं। अनेक लोग सोचते हैं कि हलके और कम आवृत्ति वाले दौरों के उपचार की आवश्यकता नहीं। ऐसा सोचना गलत है। दौरे चाहे छोटे हों या बड़े, नींद में आयें अथवा जागृत अवस्था में, सर्वव्यापी हों या सीमित स्थानीय, सभी का समान रूप से उपचार आवश्यक है।

दौरे के प्रकार

प्रत्येक मरीज में दौरों के विभिन्न रूपों का चिकित्सीय विवरण अथवा ई.ई.जी. अध्ययन अथवा दोनों से सटीक निर्धारण अत्यंत जरूरी है क्योंकि सभी दौरों में एक औषधि का प्रभाव एक समान नहीं होता है। अनुपस्थिति (एबसेंस) दौरों के मूल में मौजूद रोगकारी कार्यविधि अन्य दौरों की तुलना में नितांत भिन्न होती है।

उपयुक्त औषधि का चुनाव

जैसा कि पहले ही बताया जा चुका है कि दौरों का प्रकार, उनकी तीव्रता, उनकी आवृत्ति तथा तात्कालिक रूप से बढ़ावा देने वाले कारक, ये सब आदर्श औषधि के चयन को प्रभावित करते हैं। सभी मरीजों को औषधि उपचार के लक्ष्य से परिचित करा दिया जाना चाहिए। चिकित्सकों के लिए एक उपयोगी नियम है—वे उन्हीं औषधियों का प्रयोग करें जिनसे वे परिचित हों। किसी नयी औषधि का नुस्खा लिखने के पूर्व उसके बारे में पूरा ज्ञान प्राप्त करें। बिना सोचे-विचारे नयी औषधियां उपयोग में जाने की वर्तमान प्रवृत्ति को रोकना चाहिए। सारणी-1 में दौरों के अलग-अलग प्रकारों के लिए उपयुक्त औषधियों को दिखाया गया है। औषधि चुन लिए जाने के बाद मरीजों को उनके आम दुष्प्रभावों के बारे में पूरी जानकारी दी जानी चाहिए। औषधि का मूल्य चयन को बहुत प्रभावित करता है। विकासशील देशों में, जब औषधि को लंबे समय तक लिया जाना हो, तो

मूल्य के आधार पर उसका चयन एक अत्यंत व्यावहारिक सत्य है चाहे अकादमिक दृष्टि से वह चयन आदर्श क्यों न हो। उपचार आरंभ कर दिए जाने के बाद उसे बिना रोके, उस समय तक जारी रखना चाहिए जब तक कि कम से कम तीन वर्ष की दौरा-मुक्त अवधि न बीत जाये। तत्पश्चात् 2 से 4 माह की अवधि में औषधि की मात्रा धीरे-धीरे घटाकर शून्य कर दी जाती है। दौरा पुनः आ सकने की आशंकाओं से मरीज को आगाह कर देना चाहिए। दैनिक जीवन में अब बंधनों से छूट दी जा सकती है। मिर्गी-रोधी दवाइयों की असफलता के प्रमुख कारणों को सारणी-2 में दिखाया गया है।

एकल औषधि की तुलना में बहु-औषधि उपचार

मिर्गी के अनेक मरीजों में अनेक कारणों से एक साथ एक से अधिक औषधियों का उपयोग करना पड़ सकता है। इन कारणों में से कुछ इस प्रकार हैं—दौरों के प्रकारों के लिए कोई एक अकेली औषधि प्रभावकारी न हो, एक से अधिक प्रकार के दौरे आते हों, अंतर्निहित रोग विकृति गंभीर किस्म की हो तथा मरीज एवं चिकित्सक की मनोवृत्ति व आवश्यकताएं। यदि किसी मरीज में प्रथम मिर्गी-रोधी औषधि अनुपयुक्त या अप्रभावकारी प्रतीत हो तो अनेक डाक्टर समयावधि तथा दवाई की मात्रा पर गौर किए बिना जल्दबाजी में दूसरी ओर फिर तीसरी औषधि साथ-साथ देने लग जाते हैं। दौरे की पुनरावृत्ति के समय यदि मरीज संयोग से किसी अन्य डाक्टर के पास सलाह के लिए चला जाए तो इस बात की संभावना और बढ़ जाती है कि उसे कोई दूसरी औषधि का नुस्खा लिख दिया जायेगा। चिकित्सक व मरीज दोनों को बहु-औषधि उपचार की प्रवृत्ति से बचना चाहिए। यह न केवल महंगी है वरन औषधियों के दुष्प्रभाव अनेक व तीव्र हो उठते हैं। दुनिया भर के विशेषज्ञों ने अनेक शोधपत्रों में यह प्रतिपादित कर दिखाया है कि एक-औषधि उपचार श्रेष्ठ है। बहु-औषधि उपचार से विरले ही कुछ मरीजों को मदद मिलती है। दौरे के स्वरूप के अनुसार चुनी गयी एक औषधि की मात्रा धीरे-धीरे बढ़ाई जानी चाहिए, जब तक कि दौरे पूर्णतया रुक न जायें अथवा औषधि के दुष्प्रभाव मरीज के लिए असहनीय न हो उठें या फिर रक्त में उक्त औषधि की मात्रा नियत उपचारकारी स्तर तक न पहुंच गयी हो। प्रथम औषधि की असफलता की दशा में दो दवाइयां एक साथ देने का विचार व प्रवृत्ति देखी जाती है। इससे बेहतर तरीका यह होगा कि दूसरी औषधि की मात्रा धीरे-धीरे पर्याप्त स्तर तक पहुंच चुकने के बाद प्रथम असफल रह चुकी

सारणी-1

दौरों के प्रकार के अनुरूप औषधि का चयन

दौरे का प्रकार	*प्राथमिकता के क्रम से औषधियों* का चयन*
1. ग्रांडमाल या बड़े दौरे	1. फीनोबार्बीटोन
सर्वव्यापी अकड़न, झटके	2. डाइफिनाइलहाइडेंटाइन
	3. कार्बामाजेपाइन
	4. सोडियम वेल्प्रोएट
2. पतीतमाल (लघु दौरे)	1. सोडियम वेल्प्रोएट
सामान्य अनुपस्थिति (एबसेंस)	2. इथोसक्सीमाइड
3. जटिक अनुपस्थिति	1. कार्बामाजेपाइन
	2. डाइफिनाइलहाइडेंटाइन
	3. सोडियम वेल्प्रोएट
	4. नाइट्राजीपाम
	5. क्लोनाजेपाम
4. आंशिक सामान्य दौरे	1. डाइफिनाइलहाइडेंटाइन
(विकार स्थानी, फोकल)	2. कार्बामाजेपाइन
5. आंशिक जटिल दौरे	1. कार्बामाजेपाइन
टेम्पोरल खंड मिर्गी	2. डाइफिनाइलहाइडेंटाइन
जटिल अनुपस्थिति	3. प्रिमिडोन
6. मायोक्लोनिक	1. सोडियम वेल्प्रोएट
	2. नाइट्राजीपाम
	3. क्लोनाजीपाम
7. सतत मिर्गी अवस्था	1. डाइजीपाम (अंतःशिरा)
(स्टेटस)	2. डाइफिनाइलहाइडेंटाइन (अंतःशिरा)

* व्यक्तिगत मत

सारणी-2

मिर्गी-रोधी औषधि उपचार की असफलता

1.	मिर्गी होने तथा उसके प्रकार के निदान में गलती
2.	अनुपयुक्त औषधि या औषधि-सम्मिश्रण
3.	औषधि की खुराक का अपर्याप्त होना
4.	मरीज द्वारा उपचार के अनुपालन में चूक
5.	औषधि के दुष्प्रभाव व एकाधिक औषधियों द्वारा एक दूसरे के प्रभाव में घट-बढ़
6.	मस्तिष्क में तंत्रिका कोशिकाओं की गंभीर बीमारियां जैसे मंदबुद्धि

औषधि को धीरे-धीरे कम मात्रा में देकर बंद कर दिया जाये। दूसरी नयी औषधि की मात्रा को पुनः उसी क्रम में बढ़ाया जाये जैसा प्रथम औषधि के साथ किया गया था। द्वितीय औषधि के असफल रहने पर यही प्रणाली एक तीसरी नयी दवा पर लागू की जा सकती है। उपचार का यह तरीका मरीज व डाक्टर दोनों के धैर्य की परीक्षा लेता है। इसका सामाजिक ताने-बाने पर अवांछित असर पड़ता है। प्रथम पंक्ति की तीन या चार औषधियों का एकल विधि से उपयोग असफल रहने पर मरीज को बहुविध औषधियां लेनी ही पड़ती हैं। एक साथ दो औषधियों का उपयोग करते समय दुष्प्रभावकारी उच्च मात्रा के उपयोग से बचना चाहिए। बहु-औषधि उपचार को आरंभ से टालना कहीं अधिक आसान है बजाय इसके कि अधिक दवाइयों का सेवन कर रहे मरीज को पुनः एक औषधि उपचार पर ले आना। देखा गया है कि मिर्गी के लगभग 60 प्रतिशत रोगियों में सिर्फ एक औषधि के उपयोग से दौरों को सफलतापूर्वक नियंत्रित किया जा सकता है। लगभग 25-30 प्रतिशत मामलों में शायद दो दवाइयों का सम्मिलित उपयोग बेहतर परिणाम देता है। दस से पंद्रह प्रतिशत मरीजों में 3 या अधिक दवाइयों द्वारा भी कोई विशेष लाभ नहीं पहुंचता है। अनुभव से पता चलता है कि सभी उपलब्ध दवाइयों की तरह-तरह के संयोज या वर्ग बनाकर उपयोग में लाने पर भी इन 10-15 प्रतिशत मरीजों में विशेष लाभ नहीं हो पाता है। पर्याप्त औषधियों की पर्याप्त मात्रा के बावजूद कुछ मरीजों में हल्के दौरे आते रहते हैं। यदि ये दौरे कम अवधि के व कम तीव्रता के हों तो मरीज के लिए बेहतर होगा कि मिर्गीरोधी दवाइयों की मात्रा को ऊंचे दुष्प्रभावी स्तर तक बढ़ाने के स्थान पर, उन छोटे दौरों को जीवन का अंग मानकर स्वीकार कर लें। दौरों को पूरी तरह रोकने के उद्देश्य से या तो आप बच्चे को सुस्त, उनींदा, भुलक्कड़, भ्रमित बना दें या फिर कुछ दौरों को आने दें। निश्चय ही यह कठिन निर्णय है। उम्मीद की जाती है कि नयी अच्छी तथा अधिक प्रभावकारी दवाइयों के विकास से कोई उत्तर निकल पाये।

दौरों पर नियंत्रण और सीखने-समझने की क्रियाविधि एवं जीवन मूल्यों में सुधार एक दूसरे से जुड़े हुए हैं।

औषधि सेवन की समय-तालिका

अनेक वर्षों के श्रम के पश्चात् औषधि उद्योग ने जो दवाइयां उपलब्ध करायी हैं उन्हें दिन में तीन बार लेना पड़ता है। चिकित्सकों को ऐसा ही नुस्खा लिखने की आदत-सी पड़ गयी है। पिछले दो-तीन दशकों के दौरान दवाई का पेट में

आंतों द्वारा अवशोषण, शरीर के अंगों में उसका रक्त द्वारा वितरण, गुर्दों व यकृत द्वारा उसका उत्सर्जन व प्रभावशीलता की विशिष्ट दिशा आदि पहलुओं की बेहतर सैद्धांतिक समझ विकसित हुई है तथा दवाइयों की भूमिका पर नये दृष्टिकोण सामने आये हैं। सभी मिर्गी-रोधी दवाइयों की अर्ध-आयु पर अब नयी जानकारी उपलब्ध है। अर्ध-आयु की परिभाषा है—रक्त व शरीर के ऊतकों में मौजूद औषधि की सक्रिय मात्रा का घटकर आधी रह जाने की अवधि। यदि किसी औषधि की अर्ध-आयु 24 घंटे से अधिक है तो उसे मात्र एक खुराक प्रतिदिन के रूप में लिया जा सकता है। यदि अर्ध-आयु 12 या 8 घंटे हो तो उक्त औषधि को दिन में क्रमशः 2 या 3 बार लेना होगा। लंबी अर्ध-आयु का अर्थ है रक्त में उस औषधि की मात्रा को स्थिर अवस्था में पहुंचने में अधिक दिन लगेंगे। अर्ध-आयु का सिद्धांत निम्न अवस्थाओं में लागू नहीं होता—शैशवावस्था, बाल्यावस्था, मंद बुद्धि व मस्तिष्क की अन्य बीमारियों तथा वैयक्तिक विभिन्नताओं में अनुभवों से पता चलता है कि मरीज अक्सर दोपहर की खुराक लेना भूल जाते हैं। यदि संभव हो तो उस खुराक को टाला जाना चाहिए। यदि प्रतिदिन सिर्फ एक खुराक का सेवन करना हो तो बेहतर होगा कि उसे रात्रि में सोने से पूर्व लिया जाये। सारणी-3 में दिखाया गया है कि कैसे विभिन्न औषधियों को दिन में एक या दो बार लिया जा सकता है। औषधियों के सेवन में कुछ लचीलापन रखने से मरीज उपचार विधि का अच्छी तरह पालन करते हैं तथा दौरों पर बेहतर नियंत्रण होता है। औषधि सेवन की अनेक समय सारणियां होने से मरीज उनका पालन ठीक से नहीं करते हैं और दौरों पर नियंत्रण भी ठीक से नहीं हो पाता है।

रक्त प्लाज्मा में मिर्गी-रोधी औषधि के मात्रा-स्तर का अनुमापन

एकल औषधि उपचार के पक्ष में वर्तमान प्रमाण बहुत मजबूत हैं। अतः किसी औषधि के बेअसर होने का निर्णय लेने से पूर्व जरूरी है कि उसकी खुराक को एक हद तक बढ़ाया जाये ताकि रक्त में उसकी मात्रा उपचारकारी स्तर तक पहुंच जाये। यदि मरीज में दौरे बार-बार आ रहे हों तो औषधि के प्रभाव का अनुमान दौरों की संख्या में कमी से लग जाता है। लेकिन यदि किसी मरीज में दौरे कम आते हों, लंबे अंतराल पर आते हों तो उपचार की पर्याप्तता या अपर्याप्तता का पता लग पाना मुश्किल होता है। इस स्थिति में रक्त में मिर्गी-रोधी औषधि की मात्रा ज्ञात करना एक उपयोगी प्रमाण होता है। सारणी-4 में ऐसी ही उपयोगिताओं को प्रस्तुत किया गया है। यदि उक्त मात्रा उपचारकारी सीमा में हो तो गंभीर

दुष्प्रभावों के बगैर दौरों पर नियंत्रण की पर्याप्त संभावना रहती है। आम उपयोग में आने वाली औषधियों की उपचारकारी मात्रा सारणी-5 में दी गयी है। रक्त सीरम में औषधि की मात्रा को मापने की अनेक रासायनिक विधियां हैं। आजकल अच्छी प्रयोगशालाओं में द्रव-गैस रंगमापन (गैस-लिक्विड-क्रोमैटोग्राफी या एंजाइम इम्यूनोऐसे) एंजाइन प्रतिरक्षा आमापन नामक विधियों का उपयोग होता है। इन विधियों से औषधियों के प्रोटीन अणुओं से जुड़ी हुई सांद्रता ज्ञात की जाती है। रक्त में औषधि की मात्रा मापने की बेहतर विधि वह होगी जो सटीक व बार-बार एक जैसे परिणाम दे। नयी विधियों से मुक्त रूप से रक्त प्लाज्मा में घुली हुई औषधि की मात्रा माप ली जाती है, लेकिन मुक्त औषधि के स्तर का मापना अतिरिक्त रूप से उपयोगी नहीं पाया गया है। यदि किसी मरीज में औषधि की आम औसत या उससे भी कम खुराक से दौरे नियंत्रित हों तो रक्त में उसकी मात्रा मापने की जरूरत नहीं होती। फीनोबार्बीटोन और फेनीटाइन औषधि के संदर्भ में प्रायः ऐसा ही देखा जाता है। अनेक विकसित तथा विकासशील देशों में काफी अधिक रोगियों में दौरों का नियंत्रण औषधि की रक्त मात्रा मापे बिना ही किया जाता है। तथापि उसकी उपयोगिता से इनकार नहीं किया जा सकता। इस बात पर बल दिया जाना चाहिए। अंतिम निर्णय मूलतः नैदानिक प्रभाव पर ही आधारित होता है। औषधि का स्तर कथित सामान्य दायरे में लाने के लिए उपचार में परिवर्तन नहीं किये जाते।

सारणी-3

औषधि सेवन की आवृत्ति

औषधि	*अर्ध-आयु (घंटों में)*	*स्थिर अवस्था (दिनों में)*	*सेवन की आवृत्ति*
फीनोबार्बीटोन	36-40	14-21	प्रतिदिन एक खुराक
डाइफिनाइलहाइडेंटाइन	15-20	5-10	प्रतिदिन एक खुराक
कार्बामाजेपाइन	10-30	4-6	प्रतिदिन दो खुराक
सोडियम वेल्प्रोएट	8-18	2-4	प्रतिदिन दो खुराक
बेंजोडाइजेपाइन			
नाइट्राजीपाम	20-24	4-8	एक या दो खुराक
क्लोनाजीपाम	24-30	4-8	प्रतिदिन एक या दो खुराक
इथोसक्सीमाइड	30-60	5-8	प्रतिदिन एक खुराक

औषधियों द्वारा एक दूसरे के प्रभावों पर असर (अन्योन्य-क्रिया)

पिछले वर्षों में मिर्गीरोधी औषधियों के चयापचय तथा 'भेषज-बल-गतिकीय' (फ्रार्मेकोकाइनेटिक्स) संबंधी ज्ञान में बहुत प्रगति हुई है। कई अन्योन्य-क्रियाओं का वर्णन किया गया है जिनमें मिर्गी-रोधी औषधि की खुराक घटाने-बढ़ाने से साथ में ली जा रही अन्य औषधि की रक्त मात्रा व भेषजीय प्रभाव पर असर पड़ सकता है तथा एक अन्य औषधि की खुराक में परिवर्तन से मिर्गी-रोधी दवा की रक्त मात्रा व भेषजीय प्रभाव बदल सकते हैं। यदि कोई मरीज औषधि की एक नियत खुराक का सेवन बिना किसी दुष्प्रभाव के कर रहा हो और उसमें यकायक ये दुष्प्रभाव प्रकट हो जायें तो संभव है कि उसने कोई ऐसी औषधि का सेवन किया हो जो रक्त में मिर्गी-रोधी दवा की मात्रा को बढ़ा देती है। मिर्गी-रोधी दवाइयां आपस में एक दूसरे पर ऐसे ही प्रभाव डालती हैं। रक्त में उनकी मात्रा कम-ज्यादा होने से दौरों पर नियंत्रण बिगड़ जाता है। मिर्गी-रोधी दवाइयों की अन्योन्य-क्रिया से निम्न वर्ग की औषधियां प्रभावित होती हैं—खून का थक्का बनना रोकने वाली औषधियां, बुखार कम करने वाली औषधियां, स्टीराइड, अवसाद कम करने वाली औषधियां तथा अन्य। यह देखा गया है कि बेंजोडाइजेपाइन वर्ग की औषधियां कम अन्योन्य प्रभाव डालती हैं। 'डाइफिनाइल हाइटेंटाइन' नामक औषधि पर अन्य दवाइयों का बहुत असर पड़ता है। यह याद रखना महत्वपूर्ण है कि औषधि विषाक्तता स्वयं पुनः दौरों को जन्म दे सकती है। औषधि संयोज्यों की अन्योन्य-क्रिया की मात्रा और दिशा भिन्न होती है और उनके बारे में पहले से कुछ नहीं पता होता है। ट्राइसाइक्लिक अवसाद-रोधी तथा न्यूरोलैप्टिक औषधियों से दौरों पर नियंत्रण बिगड़ सकता है अथवा उनके प्रयोग से दौरे आ सकते हैं। उपरोक्त तथ्यों के प्रकाश में यह स्पष्ट हो जाता है कि बहु-औषधि उपचार से बचा जाना चाहिए।

सारणी-4

रक्त स्तर की मानीटरिंग

1. प्रभावशील व उपचार जनक स्तर
2. अनुपालन में चूक का पता लगाना
3. औषधि विषाक्तता
4. औषधियों द्वारा एक दूसरे के प्रभावों में घट-बढ़
5. बहुऔषधि उपचार आरंभ करने के पूर्व
6. शोधकार्य

सारणी-5

औषधि दिवस	मात्रा/खुराक बच्चे (मिग्रा./कि.ग्रा. दिवस)	व्यस्क मि.ग्रा. दिवस	उपचारजनक मात्रा का दायरा (माइक्रोग्राम/मिलीग्राम या मि.ग्रा/लि.)	दुष्प्रभावी स्तर (माइक्रोग्रोम मिलीग्राम/ ली.)
फीनोबार्बीटोन	1-5	60-90	10-30	40
डाइफिनाइल-हाइडेंटाइन	4-7	300-400	10-20	20
प्रिमिडोन	10-25	500	10-30	40
कार्बामाजेपाइन	7-15	1200	6-12	12
सोडियम वेल्प्रोएट	10-60	1200	50-100	100
इथोसक्सीमाइड	20-30	750	40-100	100
नाइट्राजीपाम	0.5-1	5-10	—	—
क्लोनाजीपाम	—	2-6	0.025-0.075	—

फालो-अप

सही निदान होने व उपचार प्रारंभ होने से चिकित्सक की जिम्मेदारी समाप्त नहीं हो जाती। अन्य आम बीमारियों के विपरीत मिर्गी का उपचार लंबे समय तक चलता है। आरंभिक दिनों में, जबकि दौरे निर्यंत्रित न हो गये हों तथा औषधि की पर्याप्त खुराक का सेवन न किया जाने लगा हो तब तक मरीज को चाहिए कि वह हर तीन-चार सप्ताह में चिकित्सक से मिले। बाद में यह अंतराल बढ़कर तीन से चार माह हो सकता है। यह प्रश्न पूछा जा सकता है कि इतने नियमित फालो-अप की क्या आवश्यकता ? अनुभव से प्रमाणित होता है कि नियमित फालो-अप से औषधि का अनुपालन सुनिश्चित होता है। मरीज में आत्मविश्वास बढ़ता है और लंबा उपचार निरंतर जारी रह पाता है। मरीज व रिश्तेदारों को चाहिए कि वे दौरों की संख्या, समय, अवधि, तात्कालिक बढ़ावा देने वाले कारण आदि का पूरा रिकार्ड रखें और प्रत्येक फालो-अप के समय वे इस रिकार्ड को साथ लायें। हर अवसर पर चिकित्सक उनसे पूछे कि आखिरी दौरा कब आया था ? समय के साथ इस बात की आशा और यह विश्वास बढ़ता जाता है कि वह दिन अब दूर नहीं जब उपचार बंद हो जायेगा।

उपचार के दुष्प्रभाव

मानव रोगों के उपचार में प्रयुक्त सभी औषधियों के अवांछित परिणाम हो सकते हैं। मिर्गी-रोधी औषधियां इसका अपवाद नहीं हैं। मनुष्य शरीर की कोई भी प्रणाली इन औषधियों के प्रभाव से बच नहीं पाती है। कुछ दुष्प्रभाव गौण हैं तथा कुछ गंभीर। सारणी-6 में आमतौर पर प्रयुक्त मिर्गी-रोधी औषधियों के प्रमुख अवांछित प्रभाव दिखाए गये हैं। कुछ दुष्प्रभाव सभी औषधियों से देखे जाते हैं तो कुछ विशिष्ट प्रतिक्रियाएं किसी विशिष्ट औषधि से ही होती हैं। यह आवश्यक है कि मरीजों को अवांछित प्रभावों के बारे में पूरी जानकारी दी जाये। कुछ दुष्प्रभाव औषधि की खुराक एक सीमा से अधिक होने पर पैदा होते हैं। उन्हें टाला जा सकता है बशर्ते खुराक को धीरे-धीरे बढ़ाया जाये। किसी एक मरीज में किस सीमा तक इन दुष्प्रभावों को होने दिया जाये, यह अनेक बातों पर निर्भर करता है, जैसे कि उस मरीज का व्यवसाय, व्यक्तित्व, औषधि का मूल्य तथा मिर्गी की तीव्रता।

विरूपजनकता (टीरेटोजैनेसिटी)

विरूपजनकता का अर्थ है गर्भस्थ शिशु में औषधि के प्रभाव से शारीरिक विकृति पैदा होना। मिर्गी-रोधी औषधियों का अपरूपकारी प्रभाव पुरुष वीर्य के शुक्राणु तथा स्त्री के अंडकोष दोनों पर पड़ता है। ट्राइमीथेडिओन नामक औषधि सर्वाधिक विरूपजनक है। सौभाग्य से उसका कम उपयोग होता है। अन्य औषधियों के संदर्भ में अलग-अलग निष्कर्षों वाली रिपोर्ट पढ़ने को मिलती है। डाइफिनाइल हाइडेंटाइन और उसके पश्चात फीनोबार्बीटोन शायद अन्य औषधियों की तुलना में अधिक विरूपकारी हैं। इन औषधियों के विरूपजनक प्रभाव गर्भावस्था की पहली तिमाही के दौरान होते हैं। यदि गर्भावस्था योजनानुसार हो तो औषधियां बदलकर सुरक्षित किस्म की औषधि दी जा सकती हैं। कुछ मामलों में विरूपताएं औषधि के कारण नहीं, बल्कि आनुवंशिक कारणों से भी हो सकती हैं।

कुल मिलाकर विरूपकारी खराबियां कुछ रोगियों में ही दिखाई देती हैं। माताओं के लिए संदेश है कि 90 प्रतिशत मामलों में शिशु सामान्य ही होगा। आम स्वस्थ महिलाओं में यह प्रतिशत 96 होता है। आमतौर पर पाई जाने वाली विरूपताएं हैं—होंठ या तालू का कटा होना। शल्य-क्रिया द्वारा इसका आसान उपचार संभव है। मिर्गी से पीड़ित लगभग एक तिहाई या एक चौथाई गर्भवती महिलाओं में मिर्गी के दौरे आने की आशंका बढ़ जाती है। ऐसा रक्त का आयतन बढ़ जाने से उसमें

सारणी-6

मिर्गी-रोधी औषधियों के दुष्प्रभाव

औषधि	*दुष्प्रभाव*
फीनोबार्बीटोन	सुस्ती, उनींदापन, चिड़चिड़ापन, गुस्सा, आक्रामकता, चित्तवृत्ति कमजोर होना, अति चंचलता, नयी बातें सीखने में अवरोध, चमड़ी पर दानेदार उभार
डाइफिनाइलहाइडेंटाइन	मसूड़ों का फूलना, आंख की पुतलियों का कंपन (निटेग्मस), हाथ-पैरों के काम में लड़खड़ाहट, महिलाओं में चेहरे पर पुरुषों जैसे बाल, चेहरा-मोहरा मोटा होना, स्वर में कम्पन, त्वचा पर दाने, सुस्ती, अनियंत्रित हरकतें
कार्बामाजेपाइन	त्वचा पर दानेदार उभार, चक्कर, एक वस्तु का दो दिखाई देना, दृष्टि का धुंधलापन
सोडियम वेल्प्रोएट	जी मितलाना, उल्टी होना या महसूस होना, वजन बढ़ना, बालों का गिरना व कम होना, हाथ-पैरों में कम्पन
इथोसक्सीमाइड	सुस्ती, उदासी, जी मितलाना, उल्टी, व्यवहारगत गड़बड़ी
प्रिमिडोन	फीनोबार्बीटोन जैसे
बेंजोडाइजेपाइन	
डाइजीपाम (अत:शिरा)	सुस्ती, उनींदापन, श्वास का कम होना, धीमा होना
नाइट्राजीपाम	सुस्ती, उनींदापन, लार टपकना, चक्कर आना
क्लोनाजीपाम	सुस्ती, उनींदापन, चिड़चिड़ापन, हाथ-पैरों की पेशियों में शिथिलता, असंतुलन

घुली हुई औषधियों की सांद्रता कम हो जाने और रक्त प्लाज्मा में प्रोटीन अणुओं द्वारा औषधि को बांध कर रखने का गुण प्रभावित होने से होता है। हालांकि मिर्गी से पीड़ित अधिकांश महिलाएं स्वस्थ शिशुओं को जन्म देती हैं। दौरों पर अच्छा नियंत्रण, एकल औषधि उपचार, फोलिक एसिड व अन्य विटामिनों का उपयोग तथा विरूपताओं को समय रहते पहचानने के लिए अल्ट्रासाउंड की बार-बार जांच आदि से ऐसा सुनिश्चित किया जा सकता है।

मिर्गी-रोधी औषधियों की सेवन अवधि

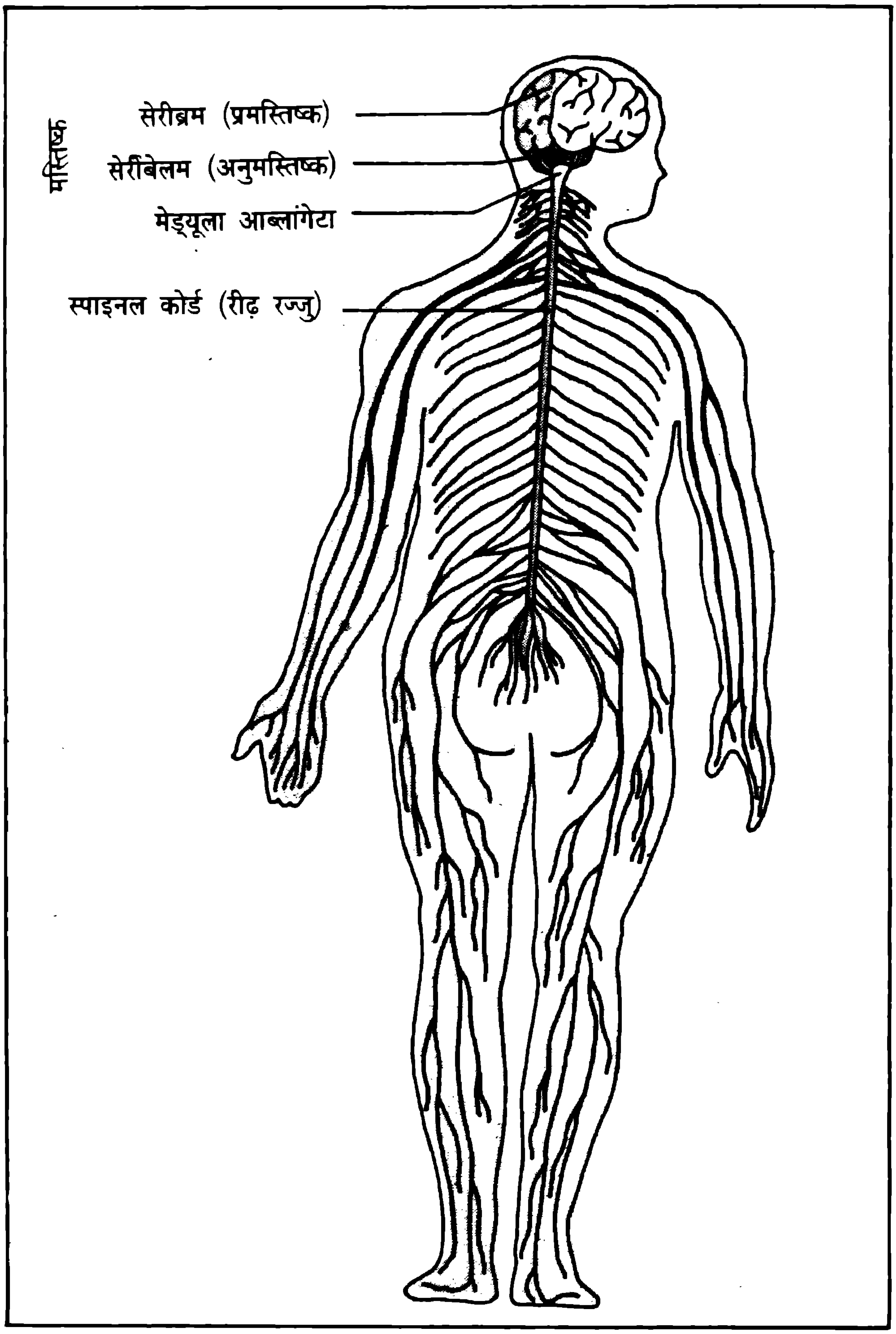
यदि किसी मरीज में कुछ वर्षों से मिर्गी के दौरे न आये हों तो उपचार रोकने से क्या खतरा ? सबसे बड़ा खतरा है कि दौरे दुबारा आ सकते हैं। उपचार रोकने के पश्चात दौरे पुनः प्रारंभ होने के सामाजिक, आर्थिक व मनोवैज्ञानिक प्रभाव होते हैं। औषधियों को अनिश्चित काल तक जारी रखने से अवांछित प्रभाव बढ़ जाते हैं, बुद्धिगत व व्यवहारगत समस्याएं पैदा होती हैं, गर्भस्थ शिशु में विरूपजनकता हो सकती है, चिकित्सक की फीस व औषधियों का खर्चा बढ़ सकता है तथा सबसे महत्वपूर्ण है—आत्मविश्वास में कमी आ जाती है। अनेक वर्षों तक दौरा मुक्त रहने के पश्चात् औषधियां रोक देने से आत्मविश्वास बढ़ता है तथा सामाजिक व आर्थिक लाभ होते हैं। औषधियां रोक देने के बाद पुनः दौरा आने की आशंका का आकलन अत्यंत समीचीन तरीके से किया जाना चाहिए। 2 से 4 वर्ष तक दौरा मुक्त रहने के बाद वयस्कों में दौरे पुनः प्रारंभ होने की आशंका 40 से 50 प्रतिशत तथा बच्चों में 25 से 30 प्रतिशत होती है। वे कौन से पूर्वानुमानकारी लक्षण हैं जिनसे आवृत्ति की अधिक आशंका वाले मरीजों को पहले से पहचाना जा सके ? मिर्गी की शुरुआत के समय मरीज की उम्र, इलाज रोकते समय की उम्र, लिंग, जाति, प्रजाति तथा परिवार में अन्य व्यक्तियों को यह रोग होना या न होना आदि कारकों का मिर्गी रोग की संभावनाओं पर विशेष प्रभाव नहीं पड़ता, लेकिन कुछ अन्य कारक निश्चय ही पुनरावृत्ति की आशंका से जुड़े होते हैं जैसे कि उपचार की शुरुआत में देरी, अंतर्निहित तंत्रिका बीमारियां, मंद बुद्धि, अन्य तंत्रिका विज्ञानी कमियां, दौरों की तीव्रता व प्रकार तथा ई. ई. जी. जांच में पृष्ठभूमि की विद्युतीय गतिविधियों का धीमा होना। मिर्गी के अधिकांश वयस्क रोगियों में दौरे जटिल, आंशिक किस्म के होते हैं और इसीलिए उनमें पुनरावृत्ति दर ऊंची होती है। औषधि उपचार बंद करने के समय ई.ई.जी. जांच में खराबी के महत्व को लेकर अलग-अलग प्रकार की रिपोर्ट उपलब्ध हैं। निश्चित मिर्गी-रूपी-विकृतियां पुनरावृत्ति दर ऊंची होने की संभावना व्यक्त करती हैं। उपचार बंद करते समय अनेक चिकित्सक मरीज की ई.ई.जी. नहीं करवाते और उनका निर्णय मूलतः नैदानिक इति-वृत्त में दौरा मुक्ति के अंतराल पर आधारित होता है। यदि ई.ई.जी. करा ली गयी हो और उसमें निश्चित खराबी हो तो उपचार जारी रखने हेतु दबाव बढ़ जाता है। उपचार किस समय बंद करना चाहिए ? दो या तीन या चार वर्ष की दौरा मुक्त अवधि में उपचार जारी रखने के पश्चात।

मेरी राय में 3 वर्ष का दौरा मुक्त अंतराल होना चाहिए। बाद में औषधियों की मात्रा धीरे-धीरे 3-4 माह में घटाई जा सकती है। इसके बाद भी यदि दौरे आना जारी रहें तो अनिश्चित काल तक औषधि देने के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं रह जाता। यह जरूर सुनिश्चित करना चाहिए कि रोग की तुलना में उपचार कहीं अधिक बड़ा बोझ न बन जाये।

शल्य-चिकित्सा

मिर्गी के समस्त रोगियों का औषधियों से उपचार करना चाहिए, परंतु साथ ही साथ उन मरीजों की भी पहचान की जानी चाहिए, जो आसानी से ठीक न हो पाते हों तथा जो अन्य उपचारों से ठीक हो सकते हों। शल्य-उपचार से ठीक हो सकने वाले मरीजों की पहचान समय से कर ली जानी चाहिए। यद्यपि ऐसी आवश्यकता बहुत थोड़े ही मरीजों में पड़ती है। इस आवश्यकता की पहचान तथा मरीज को अच्छे तंत्रिका शल्य-चिकित्सा विभाग में भेजने की जिम्मेदारी तंत्रिका विज्ञानी की होती है। शल्य-उपचार के पूर्व गिने-चुने न्यूरोसर्जरी केंद्रों पर आवश्यक, अतिविशिष्ट जांच परीक्षणों की सुविधा होती है। सभी कठिन मरीज शल्य-उपचार से लाभान्वित नहीं होते। शल्य-चिकित्सा के पश्चात् बेहतर परिणाम पाने के लिए जरूरी है कि आरंभिक जांच बारीकी से की गयी हो। शल्य-चिकित्सकों की जिम्मेदारी है कि उनके उपचार से जीवन को खतरा न हो तथा गंभीर किस्म की तंत्रिका विज्ञानी समस्याएं न पैदा हो जायें। लगभग 70 प्रतिशत मरीजों को शल्यक उपचार से अच्छा लाभ मिलता है, परंतु उनमें भी लगभग 30-40 प्रतिशत मरीजों को मिर्गी-रोधी औषधियां जारी रखनी पड़ती हैं हालांकि उनकी मात्रा कम हो जाती है।

मिर्गी के उपचार के लिए अनेक प्रकार की शल्यक विधियां विकसित की गयी हैं जैसे कि कनपटी खंड विच्छेदन, अग्रभाग विच्छेदन, प्रांतस्था तथा लिम्बिक खंड का आंशिक उच्छेदन, एमीग्डला व हिप्पो केम्पस की शल्य-चिकित्सा, दो मस्तिष्कीय गोलार्धों को जोड़नेवाली रचना 'कारपस केलोसम' का विच्छेदन तथा एक अर्धगोलार्ध का विच्छेदन। शल्यक तकनीक का निर्णय सर्जन को करना होता है। सबसे अधिक किया जाने वाला आपरेशन है, अग्र-कनपटी-खंड का विच्छेदन। इसका आवाज व स्मृति (यादाश्त) तथा सीखने की क्षमता पर प्रभाव नहीं पड़ता। अनियंत्रित जटिल मिर्गी में अनुमस्तिष्क खंड में स्थाई रूप से इलेक्ट्रोड चिपका कर उनका उद्दीपन किया जाता है। प्रांतस्था से उठने वाली मिर्गी-रूपी गतिविधि पर इसका दमनकारी प्रभाव होता है। परंतु इस विधि की उपयोगिता सीमित है



चित्र 10. मस्तिष्क के भीतर सेरीब्रम (प्रमस्तिष्क) व सेरीबेलम (अनुमस्तिष्क) की स्थिति।

तथा बहुत थोड़े मरीजों में ही यह उपयोगिता देखी गयी है (चित्र 10)।

उपचार की अन्य विधियां

मिर्गी के उपचार में अन्य विधियों का अस्तित्व व उनका उपयोग में लाया जाना अपने आप में इस बात का द्योतक है कि सभी मरीजों में दौरे आसानी से नियंत्रित नहीं होते। विभिन्न दिशाओं में जारी खोजों का एकमात्र उद्देश्य है—दौरों के नियंत्रण में रोगी की सहायता करना। ये विभिन्न विधियां उपचार का प्रथम या एकमात्र तरीका नहीं होनी चाहिए, वरन उन्हें औषधि उपचार के सहायक के रूप में देखा जाना चाहिए।

कीटोजैनिक भोजन

बच्चों की अनेक प्रकार की मिर्गी में भोजन में सिर्फ चर्बी या वसा देने से रक्त में कीटो अम्लीय पदार्थों की मात्रा बढ़ जाती है। यह अच्छी तरह ज्ञात नहीं है कि इससे दौरों पर कैसे नियंत्रण होता है। यह भोजन बेस्वाद होता है, अधिक समय तक खाया नहीं जा सकता, उल्टियां आती हैं। अतः यह लोकप्रिय नहीं है।

कंडीशनिंग तथा बायोफीडबेक

बायोफीडबेक (जैवपुनर्निवेश) का सिद्धांत है मरीज की आंखों के सामने एक टी. वी. परदे पर उसका स्वयं का ई.ई.जी. प्रवाहित करना तथा मरीज को अभ्यास द्वारा प्रेरित करना ताकि वह अपनी ई.ई.जी. लय को नियंत्रित कर पाये। इससे दौरों का दमन करने में मदद मिलती है। कंडीशनिंग विधि उन्हीं मामलों में काम करती है जहां दौरा पैदा करने वाले तात्कालिक कारण सुस्पष्ट हों और व्यवहार द्वारा नियंत्रित किए जा सकते हों।

विद्युत चुंबकीय उपचार

प्रत्येक व्यक्ति के चारों ओर उसका अपना अदृश्य विद्युत चुंबकीय आभामंडल होता है। मिर्गी रोग में यह बदल जाता है। बाह्य विधियों द्वारा विद्युत चुंबकीय मंडल में परिवर्तन कर दौरों का नियंत्रण किया जा सकता है। इस विषय में और अधिक अध्ययन जरूरी है।

नींद का नियमितीकरण

मिर्गी के उद्‌गम व निद्रा-विकारों का आपस में घना संबंध है। ई.ई.जी. प्रयोगशालाओं में अभिलेख रिकार्ड करते समय बढ़ावा देने वाले कारक के रूप में नींद व जागरण दोनों का उपयोग किया जाता है। निद्रावस्था-विकार के उपचार से न केवल ई.ई.जी. सामान्य होता है बल्कि दौरों के नियंत्रण में मदद मिलती है।

मनोपचार व तनावों का टालना

यदि दौरे मानसिक तनाव से आते हों, तो उचित होगा कि तनावपूर्ण स्थितियों को कम किया जाये या टाला जाये। तनाव मिटाने में मनोपचार सहायक होता है। कभी-कभी जीवन शैली व व्यवसाय परिवर्तन से मदद मिलती है। शराब व धूम्रपान छोड़ना लाभकारी है। विषैले पदार्थों के उपयोग या संसर्ग से बचना चाहिए।

सामाजिक तथा परिवेशगत समस्याओं की देखभाल

औषधियों द्वारा दौरों पर नियंत्रण करना महत्वपूर्ण तो है परंतु यह संपूर्ण चिकित्सा का केवल एक हिस्सा भर है। इसके अन्य पहलू भी हैं। सामाजिक व परिवेशगत समस्याओं की देखभाल किये बगैर दौरों पर बेहतर नियंत्रण संभव नहीं है। इस दिशा में महत्वपूर्ण लक्ष्य हैं—बेहतर शिक्षा, आत्मविश्वास तथा अनुशासित जीवन-शैली।

अन्य चिकित्सा विधियां

चिकित्सा उपचार की अन्य अनेक देशी विधियों से मिर्गी के उपचार का दावा किया जाता है। दावों को पुष्ट करने अथवा खारिज करने के लिए वैज्ञानिक प्रमाण उपलब्ध नहीं हैं। फिर भी मेरी समझ में कुछ मामलों में इन विधियों का उपयोग करके देखने में कोई बुराई नहीं है। विशेषकर जबकि आधुनिक चिकित्सा उपचार के बावजूद दौरों पर काबू न पाया जा सकता हो। लेकिन मेरी यह स्पष्ट राय है कि इन विधियों के चक्कर में पड़कर व्यर्थ समय खराब नहीं करना चाहिए तथा उपचार में देरी नहीं होने देना चाहिए।

सामाजिक पहलू

किसी भी राष्ट्र के लिए मिर्गी एक प्रमुख स्वास्थ्य समस्या है। इसकी व्यापकता दर में कुछ विभिन्नता तो होती है, परंतु फिर भी एक मोटे अनुमान के अनुसार प्रति एक हजार की आबादी में 5-10 व्यक्ति (0.5-1%) इससे प्रभावित होते हैं। इन आंकड़ों के आधार पर पूरे भारत भर में सभी उम्र के महिला एवं पुरुष दोनों को मिलाकर लगभग 35-70 लाख मिर्गी के रोगी होंगे। प्रतिवर्ष नये मिर्गी रोगियों की संख्या 2 से 3.5 लाख है। दुनिया के किसी भी समाज में सर्वाधिक पाई जाने वाली तंत्रिका तंत्र संबंधी बीमारियों में से मिर्गी एक है। मिर्गी एक लंबे समय तक चलने वाला रोग है और अन्य आम रोगों से कई मायनों में भिन्न है। इसका औषधि उपचार लंबा है और 40 से 50 प्रतिशत मामलों में जीवन भर लगातार प्रतिदिन औषधि लेना जरूरी होता है। अनुपालन में चूक का जल्दी ही बुरा असर होता है व दौरों की पुनरावृत्ति होती है। पुनरावृत्ति का मरीज व रिश्तेदारों पर मनोवैज्ञानिक, भावात्मक, जीविका संबंधी व आर्थिक दृष्टि से बुरा असर पड़ता है। प्रत्येक रोगी के लिए औषधि उपचार पर 10 पैसा प्रतिदिन से लेकर 15 रुपये प्रतिदिन तक लागत आती है। उपरोक्त तथ्यों से अनुमान लगाना कठिन नहीं है कि समस्या कितनी विकराल है तथा मरीज के भले के लिए क्या किया जाना चाहिए।

समाज

मिर्गी के मरीजों के प्रति समाज का काफी अधिक उत्तरदायित्व है। परिजन, रिश्तेदार, मित्र व पड़ोसियों को बीमारी के बारे में शिक्षित करना आवश्यक है। विज्ञान परक शिक्षा द्वारा समाज में व्याप्त भ्रांतियों, पूर्वाग्रहों व अज्ञान को हटाया जाना

चाहिए। लोगों को यह पता होना चाहिए कि दौरे के समय क्या करें ? रोगी की श्वसन नली व गला खुला हो, यदि गले में थूक, लार, उल्टी, कफ भरे हों तो कपड़े से पोंछकर निकाल दिए जायें। रोगी को बिस्तर से गिरकर या दीवार से टकरा कर चोट लगने से बचाना चाहिए। इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि रोगी की व्यक्तिगत संपत्ति न गायब हो और न ही चोरी हो। दौरा बार-बार आने की दशा में रोगी को अस्पताल ले जाने की व्यवस्था करें। जीभ कटने का घाव तो भर जायेगा, मगर टूटा हुआ दांत नहीं जुड़ पायेगा। परिजनों पर और अधिक जिम्मेदारी होती है। दौरों के कारण व्यक्ति का व्यवहार बदल सकता है। प्रतिक्रिया स्वरूप रिश्तेदारों के व्यवहार व रुख में बदलाव आता है। अब यह अधिक से अधिक माना जाने लगा है कि इन व्यवहारों में सुधार लाने से तथा बीमारी के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करने से दौरे से जुड़े हुए बुरे अनुभव बदले जा सकते हैं। बीमारी का सामना करने की हिम्मत व विश्वास जगाए जा सकते हैं। टूटे हुए परिवार में मरीज को ठीक रख पाना मुश्किल होता है। माता-पिता की जिम्मेदारी होती है कि उनके बच्चों में उपचार का पूरा-पूरा अनुपालन हो। मरीजों को समाज से दया व सहानुभूति नहीं बल्कि आत्मसम्मान चाहिए। समाज में मिर्गी के मरीजों के उतने ही अधिकार हैं जितने अन्य लोगों के।

विद्यालय व अध्यापक

मिर्गी के अधिकांश मरीज सामान्य बच्चे व किशोर होते हैं। अनेक माता-पिता चोट के भय से उन्हें स्कूल भेजने में डरते हैं। दौरों में जीभ कट सकती है, दांत टूट सकते हैं, हड्डियां टूट सकती हैं व खिसक सकती हैं तथा अन्य चोटें लग सकती हैं। माता-पिता को यह सोचना चाहिए कि तमाम सुरक्षात्मक उपायों के बावजूद ऐसी चोटें घर पर भी लग सकती हैं। यह भली-भांति सिद्ध किया जा चुका है कि मिर्गी से पीड़ित बच्चों को आवश्यकता से अधिक संभालकर रखना कहीं अधिक हानिकारक है। इसकी कोई आवश्यकता नहीं होती है। औषधि उपचार के चलते चोटें कम आती हैं और यदि आ भी जायें तो उनका उपचार संभव है। ये बच्चे मिर्गी की वजह से पहले ही एक कमी भोग रहे होते हैं। बच्चों को स्कूल जाने से रोक कर माता-पिता उनके जीवन की कमियों को बढ़ावा देते हैं। कुछ लोगों में मिर्गी के साथ-साथ मंदबुद्धि व अन्य तंत्रिका तंत्रीय कमियां होती हैं। कुछ बच्चे सामान्य स्कूल की पढ़ाई व अन्य गतिविधियों के साथ नहीं चल

पाते हैं। ऐसे बच्चों की आवश्यकताओं की देखरेख के लिए विशेष स्कूलों की जरूरत पड़ती है। यदि बच्चे की बुद्धि सामान्य से थोड़ी ही कम हो, तो उसे आम स्कूल जाने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। मिर्गी के रोगियों को अहसास कराया जाना चाहिए कि बीमारी से जुड़ी हुई कमी की पूर्ति वे अतिरिक्त मेहनत द्वारा कर सकते हैं। इससे उन्हें आत्मसम्मान व आत्मनिर्भरता प्राप्त होती है। स्कूल के अन्य बच्चों को इस बात का ज्ञान होना चाहिए कि यदि उनके किसी सहपाठी को मिर्गी रोग हो तो उसके साथ उन्हें कैसा व्यवहार करना चाहिए। शिक्षकों की भूमिका अधिक महत्वपूर्ण होती है। मिर्गी ग्रस्त बालक को अध्ययन हेतु श्रेष्ठतम वातावरण मिल पाना उन्हीं पर निर्भर करता है। इसके अतिरिक्त (अध्यापक बच्चों में मिर्गी के प्रथम निदान अर्थात् नए मामलों की खोज में मदद कर सकते हैं। शिक्षकों को मिर्गी के विभिन्न रूपों के प्रमुख लक्षण, निदान व उपचार संबंधी मोटी-मोटी बातों की जानकारी होनी चाहिए। जिन छात्रों का पढ़ते-पढ़ते मन कहीं खो जाता हो, जिनकी स्मृति कुछ समय के लिए कमजोर प्रतीत होती हो अथवा जिनके परीक्षाफल में सतत गिरावट आ रही हो, संभव है कि वे मिर्गी से पीड़ित हों।

विवाह व संतान

बहुत समय पहले की बात नहीं है, बल्कि वर्तमान बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में भी मिर्गी के मरीजों को विवाह नहीं करने दिया जाता था। पुरुष रोगियों की नसबंदी कर दी जाती थी। मरीजों को पागलखाने भेज दिया जाता था। समाज में उनके घुलने-मिलने व उठने-बैठने पर रोक लगाई जाती थी। वे दिन व विचारधाराएं अब बदल चुकी हैं। मिर्गी रोगियों को विवाह व सन्तानोत्पत्ति से रोकने वाले कानून हट गये हैं। शादी व बच्चों के संबंध में मिर्गी के अधिकांश मरीज अन्य लोगों से किसी भांति भिन्न नहीं होते हैं। उनमें पारिवारिक व सामाजिक जिम्मेदारियां निभानें की पूरी क्षमता होती है। कुछ रोगियों में कुछ कमियां हो सकती हैं फिर भी बिना किसी बाहरी मदद के वे अपना काम चला लेते हैं। विवाहित जीवन की सफलता के लिए पति-पत्नी में आपसी समझ व सम्मान तथा परिवार के अन्य सदस्यों के साथ सामंजस्य चाहिए। यह समझ हो तो मिर्गी कहीं आड़े नहीं आती। कुछ मिर्गी रोगी पति दुर्भावनावश कभी-कभी अपनी पत्नियों को शारीरिक प्रताड़ना पहुंचाने के लिए, मिर्गी का बहाना ले सकते हैं। कुछ मरीजों में सामाजिक मर्यादाओं से परे जोर-जबरदस्ती भरा अतिकामुक व्यवहार देखा जाता

है। स्त्रियों के संबंध में प्रायः पतियों व ससुराल वालों को शिकायत रहती है कि इस बीमारी के बारे में पहले से न बताकर उन्हें धोखा दिया गया है। उन्हें समझना चाहिए कि यह रोग विवाह के पश्चात् भी हो सकता है। हिंदू विवाह कानून की धारा 13 (111) या भारतीय संबंध कानून की धारा 12 में परिभाषित पागलपन के आधार पर मिर्गी को तलाक का कारण नहीं बनाया जा सकता। हालांकि यदि किसी पति-पत्नी में मिर्गी के कारण भावात्मक अथवा सामाजिक झगड़े हों तो उनका दौरों के नियंत्रण पर अवश्य प्रभाव पड़ेगा जो उनके व्यवसाय, सामाजिक तथा आर्थिक पहलुओं में जरूर परिलक्षित होगा। इन मामलों में पारस्परिक सहयोग से विवाहित जीवन को स्थायित्व प्रदान किया जा सकता है, जिसका दौरों के नियंत्रण पर भी अच्छा प्रभाव पड़ेगा।

मिर्गी की वजह से संतानोत्पत्ति के विचार का विरोध नहीं होना चाहिए। यह सही है कि मिर्गी से पीड़ित माता-पिता के बच्चों में यह रोग होने की आशंका कुछ प्रतिशत अधिक होती है, परंतु जोर इस बात पर दिया जाना चाहिए कि 80 से 90 प्रतिशत मामलों में बच्चे सामान्य होंगे। इस बात की भविष्यवाणी नहीं की जा सकती कि किस बच्चे को यह रोग होगा। संभव है कि प्रारंभ के 2-3 बच्चे स्वस्थ हों। पति-पत्नी दोनों को मिर्गी हो तो भी ज्यादा बच्चे ऐसे होंगे जिन्हें यह रोग नहीं होगा। इसके विपरीत यह भी संभव है कि भले-चंगे स्वस्थ माता-पिता की संतानों को मिर्गी रोग हो। इसलिए निष्कर्ष के तौर पर मैं यह बिना झिझक कह सकता हूं कि सामाजिक, भावात्मक, आर्थिक व कानूनी उलझनों के रहते मिर्गी रोग से ग्रस्त पुरुष व स्त्री के मध्य विवाह संबंध एक श्रेष्ठ विकल्प है।

व्यवसाय

यह सच है मिर्गी के रोगियों को कुछ व्यवसायों में काम नहीं दिया जाना चाहिए। उदाहरण के लिए वाहन चालक, विमान चालक, खतरनाक मशीनों का संचालन, बिजली का काम, भवन निर्माण कार्य, शल्य-चिकित्सा, आदि। किसी व्यक्ति को मिर्गी का दौरा आने की दशा में उसे नौकरी से नहीं निकाला जाना चाहिए बल्कि काम बदल कर सुरक्षित किस्म का दिया जा सकता है। कार्यस्थल पर परिस्थितियां स्वस्थ व सुरक्षित होनी चाहिए। भीड़, गर्मी, उमस, अंधेरा, ऊबड़-खाबड़ फर्श जैसी परिस्थितियों से बचा जाना चाहिए। कार्यस्थल पर चिकित्सा सेवा तत्काल उपलब्ध होनी चाहिए। कर्मचारियों को चोट लगने की दशा में पर्याप्त मुआवजा दिया जाना

चाहिए। किसी भी अन्य काम करने वाले के समान मिर्गी रोगी भी आत्मसम्मान की अपेक्षा करता है और दया की भीख नहीं मांगता। मिर्गी के थोड़े से रोगी (लगभग 20 प्रतिशत) तीव्र व अनियंत्रित किस्म के दौरों का शिकार होते हैं जिन्हें साथ-साथ मंदबुद्धि व अन्य तंत्रिका विज्ञानी विकार हो सकते हैं। इस प्रकार के मरीजों को विकलांग कोटि के मरीजों में रखा जाना चाहिए। विकलांग व्यक्तियों के लिए आश्रित कर्मशाला में काम करना एक अच्छा उपाय है। काम सुरक्षित हो, साफ सुथरा हो, पैसा चाहे कम मिले, लेकिन इससे उन्हें दिमागी सुकून और आत्मसम्मान मिलेगा। लोगों में मिर्गी की बीमारी व अन्य कमियां छिपाने की प्रवृत्ति होती है जिसका बुरा प्रभाव पड़ता है क्योंकि बाद में सच्चाई का पता चलने पर मरीज के साथ और ज्यादा भेदभाव होता है। इस अवधि में ठीक से उपचार न होने के कारण तीव्र दौरे आ सकते हैं तथा गंभीर जानलेवा चोटें लग सकती हैं। यह सब रोका जा सकता है। मिर्गी के मरीजों का बीमारी के कारण भेदभाव नहीं किया जाना चाहिए बल्कि उन्हें उनकी असली योग्यता व कमियों के आधार पर पहचाना जाना चाहिए। जीवन के महत्वपूर्ण पड़ावों पर व्यवसाय संबंधी निर्णय लेते समय उन्हें अनुभवी लोगों का मार्गदर्शन उपलब्ध होना चाहिए। सभी सहकर्मियों को इस प्रकार शिक्षा दी जानी चाहिए ताकि मिर्गी से जुड़े हुए भय व मिथ्या धारणाएं दूर की जा सकें। वे जिस संस्थान में कार्य कर रहे हों, उन्हें उसी में अपने उपयुक्त कोई दूसरा सुरक्षित काम ढूंढ़ पाने की स्वतंत्रता होनी चाहिए।

खतरे वाले कारण

मिर्गी के रोगियों व परिजनों को कुछ खतरों के बारे में साफ-साफ बता देना चाहिए। पूरे वैज्ञानिक तथ्यों तथा आपसी विश्वास के आधार पर प्रारंभ में ही अथवा उपयुक्त समय पर दी गयी सलाह दीर्घकाल तक उपयोगी साबित होती है। उपचार के दौरान समय-समय पर विभिन्न खतरों का पुनरावलोकन किया जाना चाहिए।

वाहन चलाना

यदि दौरे नियंत्रित न हों तो वाहन चलाने की अनुमति नहीं दी जा सकती। वाहन चालन न केवल मरीज के लिए नुकसानदायक हो सकता है बल्कि उससे दूसरों को भी चोट पहुंच सकती है। इस बात के कोई मायने नहीं कि दौरे छोटे हैं या बड़े, नींद में आते हैं या जागृत अवस्था में। इसका क्या भरोसा कि जिस मरीज

को अभी नींद में दौरे आते थे उसे आगे जागते हुए में नहीं आयेंगे ? दौरों पर नियंत्रण हो जाने के बाद वाहन चालन की अनुमति देने का निर्णय कठिन व विवादास्पद होगा तथा अनेक पहलुओं पर निर्भर करता है। कुछ मरीजों के लिए वाहन चला पाना मौजमस्ती का नहीं बल्कि जीविका का प्रश्न हो जाता है। अनेक मरीज अपनी बीमारी छिपा जाते हैं। यह और भी बुरा है। अलग-अलग देशों में वाहन चालन के कानून अलग-अलग हैं। बच्चों के लिए साइकिल चला पाना न केवल मनोरंजन है बल्कि आवागमन की सुविधा व स्वतंत्रता भी। खुले स्थानों व खेल के मैदानों में साइकिल चलाने की अनुमति दी जा सकती है लेकिन यातायात भरे मुख्य मार्ग पर नहीं। सार्वजनिक वाहनों को चलाने की अनुमति कभी नहीं दी जा सकती।

तैराकी

मिर्गी के अधिकांश रोगियों के लिए तैरना जीवन की जरूरत नहीं, केवल मनोरंजन व खेलकूद है। तैरते समय वे डूब सकते हैं अथवा उन्हें चोट लग सकती है। यदि तैरना आवश्यक हो तो मिर्गी के रोगियों को तैरने की अनुमति दी जा सकती है बशर्ते उनके साथ कोई निगरानी करने वाला हो।

भोजन पकाना

अधिकांश वयस्कों, विशेषकर स्त्रियों के लिए भोजन पकाना प्रमुख दैनिक कार्य है। हमारे समाज में कुछ ही महिलाएं ऐसी होंगी जो भोजन पकाने का काम नहीं करती होंगी। मिर्गी के रोगियों को यदि भोजन न पकाना पड़े तो सबसे अच्छा होगा। लेकिन जिन रोगियों को भोजन पकाना पड़े उन्हें भोजन पकाने की सुरक्षित विधियों की जानकारी दे दी जानी चाहिए। भोजन खड़े-खड़े पकाना चाहिए और कुकिंग रेंज के चारों ओर सुरक्षात्मक जाली जरूर होनी चाहिए। चूल्हा, अंगीठी अथवा स्टोव की अपेक्षा गैस पर भोजन पकाना अधिक सुरक्षित होगा। भोजन पकाने में कम समय लगाना चाहिए। काम सलीके से हो तथा शीघ्र संश्लेषित अथवा नाइलोन के तथा ढीले-ढाले कपड़े नहीं पहनने चाहिए। आग की चेतावनी वाली घंटी तथा आग से बचने की युक्तियां पास में होनी चाहिए। दौरे का हल्का-सा पूर्वाभास होने पर मरीज को दूसरे कमरे में चले जाना चाहिए।

चढ़ाई चढ़ना

भारत में पर्वतारोहण अभी बहुत लोकप्रिय नहीं है। पर्वतारोहण वहुत परिश्रम वाला काम है। यह काम समूह या टीम के रूप में किया जाता है। यदि एक पर्वतारोही को दौरे आते हों तो अन्यों का जीवन खतरे में पड़ सकता है। मकान की छत, सीढ़ियां व वृक्ष पर चढ़ना सुरक्षित नहीं है, इसलिए मिर्गी के मरीजों को चढ़ाई की अनुमति नहीं देनी चाहिए।

स्त्रियां तथा गर्भावस्था

कुछ प्रकार के मिर्गी के दौरे स्त्रियों में थोड़ा अधिक आते हैं। महिलाओं में कुल मिलाकर मिर्गी के रोगियों की दर कुछ अधिक होती है। बच्चों में यह रोग होने की आशंका उस समय अधिक होती है जब पिता की अपेक्षा माता को मिर्गी हो। मिर्गी पर गर्भावस्था का प्रभाव दो विपरीत दिशाओं में देखा जाता है। कुछ महिलाओं में दौरे कम हो जाते हैं तो कुछ में बढ़ जाते हैं। मासिक रक्तस्राव के दिनों में तथा उसके दो-तीन दिन पूर्व की अवधि में दौरों की आवृत्ति बढ़ सकती है। गर्भ-निरोधक गोलियां दौरे की आशंका को बढ़ा सकती हैं, मिर्गी-रोधी औषधियों के कार्य को प्रभावित कर सकती हैं व उनके दुष्प्रभावों को बढ़ा सकती है। डाइफिनाइलहाइडेंटाइन व सोडियम वेल्प्रोएट जैसी औषधियां पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं में अधिक अवांछित प्रभाव पैदा करती हैं। किसी भी कारण से दौरे की पुनरावृत्ति द्वारा भावात्मक व मनोवैज्ञानिक उथल-पुथल महिलाओं में अधिक देखी जाती है। स्त्रियों को सामाजिक पूर्वाग्रहों का ज्यादा सामना करना पड़ता है। इस सबके बावजूद महिलाओं में मिर्गी के परिणामों का सामना करने की महान क्षमता और सहनशीलता होती है। नारी जाति द्वारा समाज के प्रति किए गये योगदान व त्याग से सबको ऋणी महसूस करना चाहिए। इन कुछ दुर्भाग्यशाली तथ्यों के बावजूद स्त्रियों के प्रति नकारात्मक रुख नहीं अपनाना चाहिए, बल्कि इससे समाज कार्य को बढ़ावा मिलना चाहिए तथा वैज्ञानिकों को इस बात के लिए प्रयास करना चाहिए कि स्त्रियों के जीवन स्तर में सुधार हो।

शराब तथा खानपान

शराब छोड़ने के दौरान दौरे पड़ सकते हैं। शराब के पीने के कारण दौरे न के बराबर पड़ते हैं। पहले से मौजूद मिर्गी की प्रवृत्ति को शराब बढ़ावा देती है तथा उसके द्वारा शरीर के चयापचय में होने वाले परिवर्तन भी दौरे के कारण बनते

हैं। मद्यपान से परिवार पर आर्थिक बोझ बढ़ता है और मिर्गी-रोधी दवाइयां खरीदने की क्षमता कम हो जाती है।

मिर्गी के मरीजों को कौन-सा विशेष भोजन लेना चाहिए, जिससे उन्हें लाभ हो—यह प्रश्न प्रायः पूछा जाता है। मिर्गी रोगी अन्य स्वस्थ व्यक्तियों के समान है। उसे भी वैसा ही संतुलित पोषक आहार चाहिए। अच्छा भोजन मिलने की दशा में उसे सभी आवश्यक पोषक तत्त्व प्राप्त हो जाते हैं। कुछ मिर्गी-रोधी औषधियां फोलिक एसिड नामक विटामिन की कमी पैदा कर सकती हैं, जो सामान्य भोजन में पर्याप्त मात्रा में रहता है। यदि किसी वजह से उसकी कमी प्रतीत हो तो मल्टी विटामिन गोलियां ली जा सकती हैं परंतु उनके नियमित सेवन की सलाह नहीं दी जाती है। गर्भधारण की योजना बनाने वाली महिलाओं को चाहिए कि गर्भधारण के पहले से विटाामिन और फोलिक एसिड का नियमित सेवन आरंभ कर दें।

राज्य सरकारें

मिर्गी से पीड़ित मरीजों के प्रति राज्य सरकारों का बहुत बड़ा दायित्व है। उन्हें समस्या की विकरालता का अनुमान होना चाहिए। अन्य देशों के समान अपने देश में भी मिर्गी के लिए सघन कार्यक्रम की आवश्यकता है जिसमें रोग संबंधी संपूर्ण सेवाएं दी जायें तथा मरीजों के पुनर्वास का कार्य किया जाये। सेवा प्रदान करने के लिए प्राथमिक आवश्यकता है—शहरी व ग्रामीण क्षेत्रों में प्रशिक्षित स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं का जाल। इन सेवाओं में प्रमुख हैं—सभी आवश्यक औषधियों की प्राप्ति व वितरण, स्वास्थ्य शिक्षा, मार्गदर्शन व मनोवैज्ञानिक सहायता। हमारे देश में कुछ शोध केंद्र स्थापित किए जायें, जहां नयी खोजों को बढ़ावा मिले, राष्ट्रीय नीतियां निर्धारित हों, स्वास्थ्य कर्मियों को प्रशिक्षण दिया जाये व पूरे राष्ट्र के लिए स्वास्थ्य सेवा के मानक स्तर तय किए जायें। हमारे नेताओं ने तय किया है कि वे राष्ट्र को ऐसी इक्कीसवीं सदी में ले जायेंगे, जहां घर-घर पर आधुनिक तकनीक पहुंचेगी। यदि हम मिर्गी से जुड़े हुए पूर्वाग्रहों, अंधविश्वासों व भ्रांतियों को नहीं मिटा पाये और उससे पीड़ित स्त्री-पुरुषों को आत्मसम्मान न दे पाये तो हमारा उक्त सपना अधूरा रह जायेगा। औद्योगिक नीति व कानूनी आधार संहिता में परिवर्तनों की आवश्यकता है ताकि लोगों को उपयुक्त रोजगार दिया जा सके व उनके रोजगार की रक्षा की जा सके। रोजगार प्रदान करने वाले सभी मालिकों का रुख मददकारी नहीं

होता है। पूरे देश में विशेष स्कूल खोले जायें जहां वे बच्चे रखे जा सकें जो अत्यंत तीव्र अनियंत्रित मिर्गी, मंदबुद्धि तथा अन्य तंत्रिका विज्ञानी विकारों से पीड़ित हैं।

नयी औषधियों की तार्किक उपयोगिता

लोकाक ने सन् 1857 में पहली बार संयोग से रजोस्त्रावी दौरों के साथ होने वाले असामान्य उत्तेजित एवं हिंसात्मक व्यवहार को नियंत्रित करने के लिए, पोटैशियम ब्रोमाइड का उपयोग किया था। तीव्र विषाक्त प्रभाव व त्वचा संबंधी प्रतिक्रियाएं सबसे बड़ी समस्या थी। उस समय मिर्गी होने की रोगजनक कार्यविधि अज्ञात थी। औषधि चयन के पीछे एकमात्र तर्क उनका निद्रा लाने वाला प्रभाव था। सन् 1912 में पहली बार फीनोबार्बीटल का उपयोग किया गया। यह ब्रोमाइडों की तुलना में चिकित्सीय रूप से निश्चित ही अधिक प्रभावशाली और कम विषाक्त साबित हुई। भिन्न रासायनिक संरचनाओं वाले अनेक बार्बीच्यूरेट यौगिकों का विकास किया गया, लेकिन इनमें से केवल कुछ ही उपयोगी साबित हुए।

सन् 1937 में नयी औषधियों के विकास का दूसरा दौर शुरू हुआ। मरीजों में नैदानिक प्रयोग के पहले, प्राणियों में प्रायोगिक परीक्षणों द्वारा परख करने की परंपरा शुरू हुई। 1938 में डाइफिनाइलहाइडेंटाइन (डाइलेंटीन) का उपयोग प्रारंभ किया गया। इसमें सुस्ती या नींद लाने वाला प्रभाव नहीं था। दौरों पर नियंत्रण अधिक असरकारी था। प्रयोगशाला जांचों के बाद और भी अनेक यौगिक विकसित किए गये परंतु इनमें से बहुत कम को चिकित्सकों की सूची में स्थान मिला। परीक्षणों से पता चला कि एक प्रकार की औषधि किसी एक विशिष्ट किस्म के दौरों में ही अधिक कारगर होती है। डाइफिनाइलहाइडेंटाइन नामक औषधि, एबसेंस (अनुपस्थिति) दौरों में उपयोगी नहीं पाई गयी। एबसेंस दौरों की मस्तिष्कीय रोग-विधि, अन्य दौरों से भिन्न समझी गयी। इसी जानकारी के बाद, 1960 में इथोसक्सीमाइड का विकास हुआ जो एबसेंस दौरों में उपयोगी पाई गयी।

नयी औषधियों के विकास के तीसरे दौर में ऐसे नये बेहतर अणुओं व

यौगिकों पर ध्यान केंद्रित किया गया जो अधिक प्रभावकारी हों, परंतु जिनके दुष्प्रभाव कम हों। इसके परिणामस्वरूप कार्बामाजेपाइन, वेल्प्रोएट तथा अनेक बेंजोडाइजेपाइन जैसे डाइजीपाम, क्लोनाजीपाम, लोराजीपाम औषधियां बाजार में आयीं।

नयी औषधियों के वर्तमान चौथे दौर में मिर्गी की क्रियाविधि की जानकारी को आधार बनाया जा रहा है। जैसाकि क्रियाविधि संबंधी अध्याय में समझाया गया है, मस्तिष्क में उत्तेजना वाली तथा दमन (शमन) पैदा करने वाली तंत्रिका कोशिकाओं के विद्युत आवेगों में एक संतुलन बना रहता है। उत्तेजक कोशिकाओं की गतिविधि बढ़ने से दौरा आता है तथा दमनकारी कोशिकाओं की सक्रियता बढ़ने से रुक जाता है। तदनुसार यह समझना कठिन नहीं है कि उत्तेजक आवेगों को कम करके या दमनकारी आवेगों को बढ़ा कर दौरों पर नियंत्रण पाया जा सकता है। गामा-अमीनोब्यूटाइरिक एसिड (जी.ए.बी.ए. या गाबा) प्रमुख दमनकारी न्यूरोट्रांसमीटर रसायन है। दमनकारी आवेगों व प्रक्रियाओं को बढ़ाने के अनेक उपाय हैं–(1) गाबा–सहकर्मी रसायनों द्वारा मस्तिष्क में गाबा की मात्रा बढ़ाना; (2) गाबा के अतिरिक्त अन्य दमनकारी पदार्थों जैसे ग्लाइसीन या टॉरीन की सक्रियता को बढ़ाना; (3) गाबा-ट्रांसअमीनेज नामक एंजाइम को दमित करके 'गाबा' के विखंडन को रोकना; (4) तंत्रिका कोशिकाओं द्वारा 'गाबा' के पुनर्ग्रहण को रोकना। इस प्रकार अनेक योगिकों को या तो परखा जा चुका है या परखा जा रहा है, परंतु अभी तक गामा विनाइल गाबा (वाइगाबाट्रिन) सबसे अधिक कारगर पाया गया है। गामाविनाइल-गाबा द्वारा गाबा के विखंडन के जिम्मेदार एंजाइम का दमन किया जाता है, जिससे मस्तिष्क में गाबा की मात्रा बढ़ जाती है।

एक अन्य विकल्प है उत्तेजनाशील प्रक्रियाओं को घटाना। हाल के शोधों में उत्तेजनाशील न्यूरोट्रांसमीटर, ग्लूटामेट के प्रभाव को अवरुद्ध करने पर विशेष ध्यान केंद्रित किया गया है। एन-मिथाइल-डी-एस्पोर्टेट (एन.एम.डी.ए.) मिर्गी के संदर्भ में महत्वपूर्ण माने जा रहे तीन प्रमुख ग्लूटामेट अभिग्राहकों (रिसेप्टर) में से एक है। एन.एम.डी.ए अभिग्राहकों के प्रतिकर्मी रसायन आजकल मिर्गी-रोधी औषधियों के विकास में सबसे आगे हैं।

तंत्रिका कोशिकाओं की उत्तेजना कम करने का एक और विकल्प है कोशिका की बाह्य झिल्ली पर स्थित सोडियम, पोटैशियम या कैल्शियम के पारगमन छिद्र मार्गों को प्रभावित करना और कोशिकाओं में इन आयनों के प्रवेश व बहिर्गमन को नियंत्रित करना। इन उपायों द्वारा कोशिकाओं की बाह्य झिल्ली को विद्युतीय

दृष्टि से स्थिर बनाया जा सकता है और मिर्गीजनक आवेगों के प्रसार को रोका जा सकता है। इस दिशा में शोध से जोनिसामाइड व फ्लुनारिजीन जैसी औषधियों की खोज का मार्ग प्रशस्त हुआ है। अनुपस्थिति या एबसेंस दौरों में प्रभावकारी औषधियां (इथोसक्सीमाइड व संभवतः वेल्प्रोएट) मस्तिष्क के थेलेमस भाग की तंत्रिका कोशिकाओं पर स्थित कैल्शियम छिद्र मार्गों पर नियंत्रण करके अपना कार्य पूरा करती है। डाइफिनाइलहाइडेंटाइन द्वारा संभवतः सोडियम मार्ग को प्रभावित करती है और कोशिका की बाह्य झिल्ली विद्युतीय रूप से स्थिर बना देती है। हाल में हो रहे शोधों में कोशिकाओं की आंतरिक उत्तेजना को नियंत्रित करने पर अधिक ध्यान दिया गया है। मिर्गी-रोधी औषधियों के विकास का यह बेहतर उपाय है। यूरोप में वाइगाबाट्रिन, लेमोट्रीजिन और आक्सकार्बामाजीन तथा जापान में जोनिसामाइड औषधियां अब मिर्गी उपचार हेतु उपलब्ध हुई हैं। निकट भविष्य में और नये यौगिकों के उपलब्ध होने की आशा की जा रही है। साथ ही साथ आदर्श औषधि हेतु खोज जारी रहेगी।

भविष्य की संभावनाएं

बीसवीं शताब्दी में चिकित्सा विज्ञान के सभी क्षेत्रों में काफी विकास और प्रगति हुई है। मिर्गी इसका अपवाद नहीं। मिर्गी रोग के लगभग समस्त पहलुओं के प्रति समझ में युगांतरकारी विकास हुआ है। रोग के कारणों को समझने में मौलिक वैज्ञानिक विषयों का काफी योगदान रहा है। मिर्गी की क्रियाविधि के बारे में कुछ अस्पष्ट तथ्यों को समझने के लिए निरंतर प्रयास जारी हैं। संबंधित जीनों को पहचानने के लिए गंभीर प्रयत्न किए गये हैं। डी.एन.ए. पुनर्संयोजी तकनीक द्वारा भविष्य में मिर्गी को नियंत्रित करने की दिशा में काफी अनुसंधान हो रहा है। अज्ञात कारणों से होने वाली मिर्गी के कारकों का पता लगाने के लिए आण्विक जैविकी का सहारा लिया जा रहा है। दमनकारी न्यूरोट्रांसमीटर (तंत्रिका रसायन) के बारे में विस्तृत जानकारी एकत्र की गयी है। इनकी सहायता से कुछ रासायनिक यौगिकों की खोज हुई है, जो फिलहाल औषधि विकास के विभिन्न स्तरों पर है। इस बात के प्रयास जारी हैं कि वर्तमान मिर्गी-रोधी औषधियों को और बेहतर बनाया जाये तथा नये यौगिकों की खोज हो, जो मिर्गी के प्रति बेहतर असर रखते हों तथा जिनमें अवांछित दुष्प्रभाव न्यूनतम हों। इन औषधियों के विकास से मरीजों की आवश्यकताओं को पूर्ण करने में बड़ी मदद मिलेगी। औषधि उद्योग पर यह नैतिक जिम्मेदारी आती है कि नयी औषधियां गरीब मरीजों के लिए कम मूल्य पर उपलब्ध हों। समय की कसौटी पर खरी न उतरने के कारण अनेक औषधियां जैसे कि ट्राइडीआन, सल्थीआम आदि परिदृश्य से गायब हो गयी हैं। आदर्श रूप से नयी औषधियां सस्ती हों, प्रभावकारी हों व दुष्प्रभावों से मुक्त हों। उम्मीद की जाती है कि निकट-भविष्य में ऐसी कुछ औषधियां उपलब्ध हो जायेंगी। बीमारी के सटीक निदान के क्षेत्र में विस्मयकारी उपलब्धियां हुई हैं (विशेषकर पिछले

दो दशकों में)। मस्तिष्क की सूक्ष्मतम रचनात्मक जानकारी संभव हुई है। मिर्गी जनित विकार स्थान (फोकस) में होने वाले चयापचय व अन्य कार्यकारी परिवर्तनों का नवीन विधियों द्वारा अध्ययन हो रहा है। शल्यक उपचार की तकनीकों में सुधार हुआ है जिससे अधिक मरीजों के लाभान्वित होने की आशा है। मिर्गी के प्रति व्यापक कार्यक्रम की परिकल्पना के विकसित होने से रोगियों के संपूर्ण पुनर्वास, मार्गदर्शन व मनोवैज्ञानिक लाभों का मार्ग प्रशस्त हुआ है। मिर्गी के सब रूपों का मिला-जुला अध्ययन करने पर पता चलता है कि 10 प्रतिशत मरीज बिना उपचार के स्वतः ठीक हो जाते हैं। लगभग 40-50 प्रतिशत उपचार से लंबे समय के लिए दौरा मुक्त हो जाते हैं और शेष 30-40 प्रतिशत को अनिश्चितकाल तक या शायद जीवन भर लगातार औषधियां लेनी पड़ती हैं। मिर्गी के संबंध में भविष्य में होने वाले विकास से इस बाद के समूह को सर्वाधिक लाभ पहुंचना चाहिए। मिर्गी के अधिकांश मरीजों के लिए भविष्य उज्ज्वल संभावनाओं से भरा है।

शिवम् ऑफसैट प्रेस, ए-12/1, नरायणा इंडिस्ट्रयल एरिया, फेज-I, नई दिल्ली 110 028 द्वारा मुद्रित